

योगी गुरु जी के प्रश्नोत्तर — भाग 16

सत्संग से 200 प्रश्नोत्तर

आध्यात्मिक प्रत्यक्ष ज्ञान मार्ग

adhyatmikpratyakshgyan.com

प्रश्न: क्या आध्यात्मिक प्रश्न खत्म हो सकते हैं? (P16-0001)

हां, क्यों नहीं हो सकते — स्वयं से मिलने पे। उम्मीद छूट जाए तो सब खत्म। उम्मीद ही तो लगाया है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या इस जन्म में अपने आप को जान पाऊंगा? (P16-0002)

हां, एकदम। सबसे सरल है अपने आप को जानना; दूसरों को जानना कठिन है, क्योंकि जान ही नहीं पाओगे। और जो नहीं जान पाओगे, उसी को जानने का प्रयास कर रहे हो; जो जान पाओगे, उसके लिए प्रयास ही नहीं कर रहे। बस इतना प्रयास करना है — जिसको जानना चाहते हो, उसे जानना छोड़ दो। लेकिन नहीं, "जान के ही छोड़ूंगा" — यही गलती हो रही है। हम एक-दूसरे को जानना चाहते हैं, और यह कभी नहीं हो सकता। तुम हमें जानना बंद कर दो, स्वयं को जान लो, बात ही खत्म। लोग कहते हैं "तुम जानते नहीं मैं कौन हूं" — इसका मतलब वे खुद नहीं जानते कि वे कौन हैं, इसलिए परिचय बताना पड़ रहा है; खाली परिचय दे रहे हैं।

प्रश्न: गुरु जी, आत्मज्ञान प्राप्ति से पहले क्या आपको पीएम, सीएम, आईपीएस, पीसीएस के सामने आने से कोई फर्क पड़ता था? (P16-0003)

नहीं, कभी नहीं। हंस के आता था। एक घटना बता देता हूं: मुझे जल्दी में जाना था, पास में बस पांच-दस रुपये थे, एक्सप्रेस में टीटी ने पकड़ लिया, बोले फाइन लगेगा। मैंने कहा दस हैं, पांच आप रख लो, पांच मुझे दे दो। बोला तुम्हें डर नहीं लग रहा? मैंने कहा डर क्या लगेगा, मैंने क्या गलत किया है, ट्रेन में ही तो बैठा हूं — वह हंसने लगा। मेरे अंदर डर नहीं था क्योंकि मैं गलत नहीं था। आदमी डरता तब है जब वह गलत होता है। गलत अगर नहीं है तो डरने की जरूरत नहीं है — सीधी बात है।

प्रश्न: कहां से आ रहा हूं और कहां को जा रहा हूं? (P16-0004)

ना कहीं आ रहे हो, ना जा रहे हो। बस आना-जाना ही भ्रम है।

प्रश्न: इतना पढ़ लिया कि पढ़-पढ़ के परेशान हो गया — ऐसा क्यों होता है?

(P16-0005)

ज्यादा अध्ययन भी आदमी को एकदम भटका देता है। ध्यान से सुनना: अगर आपके पास रोटी और सब्जी हो तो बड़े दिल से, अच्छे से खा लोगे। पर कई प्रकार की सब्जी, पुलाव, चावल, तंदूरी रोटी, नान, कई दालें हों, तो चांसेस हैं उस दिन तृप्ति नहीं होगी — आप डिसाइड ही नहीं कर पाओगे कि शुरू कहां से करें, भूखे भी रह सकते हो। ज्यादा चाँइस आदमी को परेशान कर देती है; ऐसे ही ज्यादा अध्ययन आदमी को परेशान कर देता है। इसीलिए कहा गया है कि शास्त्रों का अध्ययन गुरु के शरण में रह के करो, तो वह अध्ययन नहीं, अनुसरण करवाएगा। अनुसरण कर लोगे तो उसमें जीने लगोगे; अध्ययन में आदमी जी नहीं पाता, बस एक-दूसरे को पकड़ के सुनाता है। जितने विद्वान हैं, उनके घर वाले उनसे सबसे ज्यादा ग्रसित रहते हैं, क्योंकि जो भरा है वह निकलना चाहिए — ना तो निकल रहा है, ना अंदर जा रहा है। गुरु के शरण में रह के सरलता तो सीखी नहीं, समर्पण हो नहीं पाए, तो अपने मान के लिए बोलते हैं, उनका मान खड़ा हो जाता है। सुनाने के पहले उससे पूछो कि सुनना भी चाह रहे हो; इच्छुक हो तो ठीक, नहीं तो मुंह बंद करके आराम से बैठ जाओ।

प्रश्न: गुरु जी, आपको कभी बुखार आया कि नहीं? तबीयत खराब होती है?

(P16-0006)

तबीयत क्यों नहीं खराब होगी? हमें भी ठंडी लगती है, हमें भी गर्मी लगती है; हम बर्दाश्त करते हैं, बात अलग है। शरीर तो अपनी क्रिया करेगा ना। हमने इसको सहने की क्षमता बढ़ा ली है, लेकिन यह सब तो होता रहता है।

प्रश्न: गुरुदेव, क्या साधना काल में तीन घंटे से ज्यादा नहीं सोना चाहिए? (P16-0007)

मेरे समझ से तो कम से कम छह से सात घंटे नींद होनी चाहिए, नहीं तो शरीर का स्वास्थ्य खराब हो जाएगा। अब आप दो घंटे सो, तीन घंटे सो — आपके ऊपर है। इसलिए हम कहते हैं सोने के बाद किसी को जगाओ मत, बातचीत मत करो; सब अपनी पूरी नींद लें, फिर उठें।

प्रश्न: बाबा जी, अगर इस जन्म में कोई पाप हुआ हो तो उसका कर्मफल कर्म-विधान से इसी जन्म में चुकाना पड़ता है; फिर क्या अगले जन्म में पीछे के बुरे कर्म का प्रभाव पड़ता है? (P16-0008)

मुझे इतना मालूम है कि जो भी मैंने किया है, उसका परिणाम मुझे भोगना पड़ेगा। अब वह कब भोगना पड़ेगा, पता नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, "दुख में सुमिरन सब करें, सुख में करे ना कोय; जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय" — वह सुख, वह सुमिरन क्या है? (P16-0009)

निर्विकार होने का — क्योंकि वहां ना सुख है, ना दुख है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या साधना एकांत में ही उचित है? कृपया प्रकाश डालें। (P16-0010)

साधना एकांत में ही करनी चाहिए। उसका परिणाम आ जाए तो समाज को बांटना चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, मैं समझने के बाद भी चीजें भूल जाता हूं। क्या करूं जिससे चीजें याद रहें? (P16-0011)

भूल जाते हो — तो यह कैसे याद रहता है कि भूल गए? भूल जाते तो यह भी भूल जाते कि भूल गए। यह कैसे याद रहेगा कि मैं भूल गया, यह बताओ। लापरवाही हो गई ना।

प्रश्न: गुरु जी, मेरा मन काम में नहीं लगता — सिलाई करने में, खाना बनाने में। मंत्र जाप करती हूं, ध्यान करती हूं; जिन गुरु जी ने मंत्र दिया उन्होंने कहा था सब ठीक होगा, लेकिन कुछ नहीं हुआ। क्या करूं? (P16-0012)

खाना बनाने में मन नहीं लगता — खाना खाने में मन लगता है कि नहीं? तो फिर खाना खाने में भी मन नहीं लगना चाहिए। क्रिया और प्रतिक्रिया दोनों हो रही हैं, तो दोनों में मन लगना चाहिए — खाने में भी और बनाने में भी। जिन गुरु जी से मंत्र लिया है, उन्हीं से मिलिए, उन्हीं को पकड़िए और पूछिए कि हो क्या रहा है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या सब दुखों की एक दवा सत्कर्म और ईमानदारी है? (P16-0013)

सत्कर्म और ईमानदारी सारे दुख मिटा देंगे — ना सुख रहेगा, ना दुख रहेगा, सिर्फ तुम रहोगे। देख लो, दिन-प्रतिदिन।

प्रश्न: अगर ससुराल वाले और पति प्रताड़ित करें, तो स्त्री को ससुराल में ही रहना चाहिए या छोड़ देना चाहिए? (P16-0014)

कभी भी, कहीं भी दबाव और संकोच में मत रहो। सीधी सी बात: अगर कोई आपका आत्मिक सम्मान नहीं कर रहा है, तो उस जगह, उस व्यक्ति का त्याग करो। त्याग ही परम सुख है — जो मेरा सम्मान नहीं करे, उस जगह, उस व्यक्ति का तुरंत त्याग कर देना चाहिए। हां, यह देखो कि आप सम्मान के लायक काम कर भी रहे हो; अगर आप अपमान के लायक काम कर रहे हो और उम्मीद सम्मान की रखे हो, तब गलती आपकी है। सम्मान के लायक काम करो, सम्मान के लायक जियो, और तब कोई अपमान करता है तो उस जगह, उस व्यक्ति का तुरंत त्याग कर दो। और नहीं कर पा रहे हो तो कमजोर हो — तब एक काम करो, झेलो, और आगे बढ़ो।

प्रश्न: गुरुदेव, अगर उम्मीद ही खत्म हो जाएगी तो जीवन ही खत्म हो जाएगा?

(P16-0015)

वहीं से जीवन की शुरुआत होगी। अभी तो हम जो जीवन जी रहे हैं, हमें खुद नहीं पता कि यह जीवन सच्चा है कि झूठा; कामनाओं में जिए चले जा रहे हैं। उसके बाद इस पर चल जाओगे तो ना सच्चा है ना झूठा — वह भी खत्म हो जाएगा।

प्रश्न: गुरु जी, "उम्मीद छोड़ दो" — इसका उदाहरण देकर व्याख्या कीजिए।

(P16-0016)

उम्मीद का मतलब — जितना भी बेमतलब का धारण किए हो, जिसका ज़िंदगी में कोई काम ही नहीं, बस लोगों को आकर्षित करने के लिए, वह छोड़ दो; बस बात खत्म। लेकिन आदमी कहता है सब चीज से उम्मीद जुड़ी है, उम्मीदें खत्म कर रहे हैं तो हम कहां ज़िंदा रहेंगे।

प्रश्न: गुरु जी, क्या आत्मज्ञान होने के बाद डर-भय नहीं लगता? (P16-0017)

आत्मज्ञान होने के बाद पता चलेगा ना। क्योंकि डर-भय हटने के बाद ही तो आत्मज्ञान होता है।

प्रश्न: प्रणाम गुरुदेव, आसपास के लोग प्रभावित ना करें, इसके लिए क्या करना होगा? (P16-0018)

सामर्थ्यवान बनो — धन से, तन से, ज्ञान से — फिर किसी का प्रभाव काम नहीं करेगा। अगर आप चाहते हो मुझ पे बारिश ना गिरे, तो रेनकोट पहन लो; अब कहो रेनकोट नहीं है, तो भीगो। सामर्थ्यवान बनिए, बलवान बनिए। चाहते हो ट्रेन में जाऊं और कोई कुछ बोले ना, तो टिकट लेके जाओ। टिकट ही नहीं रहेगा और कहोगे किसी का प्रभाव काम ना करे — तो काली पैंत वाला जो भी आएगा, टीटी लगेगा; जब तक प्लेटफार्म के बाहर नहीं हो जाते, डर बना रहेगा। और टिकट है तो सोचोगे, भाई इधर भी आ जा, चेक कर ले।

प्रश्न: गुरुदेव, भजन और भक्ति में क्या अंतर है? मार्गदर्शन करें। क्या भक्ति द्वारा भी अपने आप में पहुंच सकते हैं? (P16-0019)

भक्ति का मतलब होता है कि हम किसी की भक्ति कर रहे हैं, कोई इष्ट है। भजन का मतलब होता है हमने भज दिया, उसके लिए समर्पण कर दिया। आप एक कंकड़ उठा लो और सर पे मारते रहो, और पक्का हो जाए कि इससे पहुंच जाऊंगा, तो पहुंच जाओगे। संकल्प होना चाहिए, लेकिन आपको पक्का पता होना चाहिए; अगर आपको पता है कि नहीं पहुंच पाऊंगा, तो नहीं पहुंच पाओगे। जो भी करो, अपने आप से करो, उसमें किसी को पीड़ा ना हो — यह ध्यान रखना। पर वह थोपा हुआ ना हो। किसी के द्वारा जाना नहीं है — द्वारा छोड़ देना है, अपना तरीका पैदा करना है; जान के उसे छोड़ देना, अपने तरीके से। अगर वह एक तरीका पैदा कर सकता है तो मैं क्यों नहीं? वह कहता है काले पत्थर से पहुंच जाओगे, तो मैं लाल वाला चुनूंगा, क्योंकि काला वाला उसका थोपा हुआ है। यहां विश्वास की बात नहीं, पता होना चाहिए — यहां प्रत्यक्ष की बात होती है। "भाव में विद्यते देवा" — भाव में ईश्वर का वास है। प्रह्लाद ने कहा खंभे में भगवान है — तो क्या खंभे में भगवान है? प्रह्लाद के भाव में था भगवान, प्रह्लाद ने खंभे में फेंक दिया; अगर खंभे में भगवान होता तो दुनिया का जितना भी खंभा टूटता, सब में भगवान निकलते। जैसे ही आपने दृढ़ संकल्प से, भाव से फेंका कि यह करने से उपलब्धि हो जाएगी, तो हो जाएगी — यही मेन पॉइंट है। "मैं भाव का भूखा हूं, भाव से ही मिलता हूं" — उसे कोई विधि थोड़ी चाहिए। तुम उससे हो, तुमसे वह है, तो बस तुम पैदा कर दो अपना तरीका। मैंने पक्का किया कि मैं तुमसे हूं, इसलिए पक्का करने का अधिकार मुझे है; और मैंने पक्का कर दिया कि नहीं आएगा तो नहीं आएगा — उसे रोक के हम ही रखे हैं।

प्रश्न: गुरुदेव, तो फिर विश्वास दो में किया जाता है, एक में नहीं? (P16-0020)

विश्वास तो यहां है ही नहीं — आप ही हो; विश्वास करना ना करना तो दो की बात है। विश्वास ही है जो दुनिया में सबसे ज्यादा मारा गया। दो आदमी दुकान पे गए, एक गरीब, एक अमीर; दुकानदार बोला कल लाऊंगा। दूसरे दिन बोला नहीं लाए। पैसे वाला बोला मैं किसी और से ले लूंगा; गरीब बोला भाई कल लेते आना। फिर दूसरे दिन भी नहीं लाया, तो भी कहेगा अच्छा लेते आना — क्या आप उसे विश्वास समझते हो? उसकी मजबूरी है, वह कमजोर है, अंधविश्वासी बन गया अपनी कमजोरी की वजह से। विश्वास कभी नहीं टूटता; जब भी टूटता है तो अंधविश्वास टूटता है, और अंधविश्वास आप तब करते हो जब आप कमजोर होते हो। विश्वास तो एक सीख देता है। अपनी कमजोरी को विश्वास का नाम मत दो। इसीलिए प्रत्यक्ष ज्ञान में यह बोला ही नहीं जाता कि विश्वास करो — मैं तो बोलता हूं मुझ पर एकदम विश्वास ना करना, बस ज्ञान लो और आगे बढ़ो। जब डायरेक्ट सब हो रहा है तो प्रत्यक्ष में विश्वास-श्रद्धा की जरूरत क्या है? विश्वास तब बोलता जब कल देता; इसीलिए मैं हर प्रश्न का उत्तर वर्तमान में खत्म कर देता हूं।

प्रश्न: मैं 23 साल का हूं। अगर "कुछ नहीं चाहिए" में आ गया तो बची जिंदगी में क्या करूं? (P16-0021)

तो बस आ क्यों रहे हो? पहले बची हुई जिंदगी में कुछ कर लो बालक, और फिर आना।

प्रश्न: गुरु जी, ईमानदारी का मतलब क्या है? (P16-0022)

ईमानदारी का मतलब — कर्म करते हुए छल, कपट, चोरी, बेईमानी, चापलूसी, मक्कारी, धूर्तता, पाखंड मत करो। इज्जत पाने की उम्मीद का त्याग करो, मान-अपमान का त्याग करो, योग्यता से ज्यादा पाने की उम्मीद का त्याग करो। बस यह करना बंद कर दो, ईमानदारी हो जाएगी — और सत्कर्म करो।

प्रश्न: गुरुदेव, मेरा लड़का किसी को मानता नहीं — भगवान को, देवी-देवताओं को नहीं मानता। इसका उपाय बताइए। (P16-0023)

जाने दो। लड़के को उचित तरीके से जीवन जीने दो, उसको काम करने दो। जिस देवी-देवता को मनाना होगा, वह आके बोल देगा "तू मुझे मान", तो मानेगा। आपके लिए है, उसके लिए नहीं है, तो क्यों माने? उसके लिए भी जिस दिन हो जाएगा, मानेगा। आप अपनी आस्था, अपना विश्वास किसी पे क्यों थोप रहे हो? जबरदस्ती उसे परेशान क्यों कर रहे हो? उसे संस्कारी बनाइए, एक-दूसरे का सम्मान करना सिखाइए, अच्छा जीवन जीने के लिए बताइए।

प्रश्न: गुरु जी, मेरा पढ़ाई में मन नहीं लगता। मैं क्या करूं? (P16-0024)

बस जिसमें लगता है वह करो, लेकिन परिणाम याद रखना — जो कर रहे हो, उसका परिणाम भी मिलेगा।

प्रश्न: मुझे आत्मज्ञान हो गया है, अब आध्यात्मिक ज्ञान बांटने की इच्छा है, लेकिन मां-पिता सभी खिलाफ हैं। मेरा ना नौकरी में मन है, ना किसी चीज में। (P16-0025)

पहले मात-पिता को बांटो — पकड़ के बांटो। उसके बाद संसार में निकलो: गांव हैं, क्षेत्र है, रिश्तेदार हैं, कोई तो सुनेगा; या कहीं बैठ जाओ। जैसे हम घूम-घूम के बोलते थे — कभी इस गांव, कभी उस गांव, कभी शौचालय के सामने, कभी बस में, कभी ट्रेन में; एक बात चालू हो गई तो पूरा खत्म करके छोड़ते थे। घर से शुरू करो — पहले मां-बाप को, फिर पड़ोसी को। लेकिन आत्मज्ञान बांटना, अध्ययन का ज्ञान मत बांटना, यह ध्यान रखना — प्रत्यक्ष बांटना। अगर कोई पूछे "कहां लिखा है" और आप कहो "इस बुक में लिखा है, जाके पढ़ लेना", तब समझ लो आप ज्ञान बांट रहे हो, आत्मज्ञान नहीं। ज्ञान से इस समय बहुत लोग परेशान हो गए हैं।

प्रश्न: गुरु जी, आत्मज्ञान कैसे हो? (P16-0026)

आत्मज्ञान के लिए राग और द्वेष से अपने आप को छुड़ा लो। उम्मीद से अपने आप को पूरी तरह छुड़ा लो।

प्रश्न: आत्मज्ञान की घोषणा करना कब उचित है? (P16-0027)

जब आपको हो जाए और काम करने लगे, तो लोग घोषणा कर देते हैं। फिर कभी-कभी व्यवहार में पूछने पर बताना पड़ता है; लोग खुद घोषणा कर देते हैं। जैसे स्त्री पहले महीने में अपने पति को बताती है कि गर्भ धारण हो गया; फिर एक-दो महीने में घर वालों को पता चलता है, तीसरे महीने के बाद मोहल्ले वालों को, और फिर अस्पताल भी जाना ही पड़ता है — घुमा-फिरा के सबको पता चल जाता है। लेकिन उसको भी बताना पड़ता है, क्योंकि गर्भवती महिला के खानपान का ध्यान रखना होता है; इसलिए कभी-कभी घोषणा करनी पड़ती है।

प्रश्न: गुरुदेव, मेडिटेशन और सत्कर्म भी कर्म ही है ना — तो क्या इससे कर्म-बंधन बंधता है? (P16-0028)

नहीं बंधता। जरूरतमंद के लिए करते हो तो सत्कर्म से बंधन नहीं बनता; निर्विकार होने में सहायता मिलती है।

प्रश्न: गुरुदेव, फिर यहां पे हम लोगों का सत्कर्म कैसे बन रहा है? आप कहते हैं यहां रहना ही साधना है — सिर्फ रहना, यह समझ में नहीं आया। (P16-0029)

अगर साधक की जिंदगी जी रहे हो तो बन रहा है — पिछला खत्म हो रहा है, परिवर्तनशील संसार है। अपने आत्मिक कल्याण के लिए काम कर रहे हो, जिसके लिए आए हो, जिसके लिए यह खुला है, अगर वह कर रहे हो तो हो रहा है। रहना मतलब — आप में बदलाव हो रहा है या नहीं? मानसिक बदलाव ही तो होगा; शारीरिक बदलाव क्या करोगे — गोरा होना है, बॉडी बनानी है? किस लिए आए थे? शांति के लिए। तो मिल रहा है कि नहीं? यहां से हटने पर फिर बवाल आ जाएगा — तो बवाल को खत्म करो। जहां भी जाओगे बवाल आएगा; पहले बवाल को निपटा दो, फिर जहां भी जाओगे शांति। यहां बवाल थोड़ी आ रहा है, बवाल में हम जा रहे हैं। तो बवाल भी मत करना, शांति बनाए रखना, और यहां के सिस्टम में, नियम में जीना।

प्रश्न: गुरु जी, क्या शास्त्र की सभी कथाएं ऐतिहासिक हैं या काल्पनिक? कृपया बताने का कष्ट करें। (P16-0030)

आप कुछ भी मान लो — आप क्या सीख लेते हो, यह मायने रखता है; चाहे वह ऐतिहासिक हो, सही हो या गलत, या काल्पनिक कहानी हो। हमारे सामने पात्र हैं; उस पात्र से हम क्या सीख लेते हैं, यह मायने रखता है। काल्पनिक ही सही, अगर आप सीख पाते हो। आप एक फिल्म देखते हो, पक्का पता है किसी राइटर ने कल्पना से लिखी है, फिर भी कहते हो मेरे अंदर सुधार आया; एक गाना सुनते हो और बदलाव आता है; जानते हो वे रोने का नाटक कर रहे हैं, फिर भी रो देते हो। जब आप एक फिल्म से, एक गीत से सीख सकते हो, तो इन कहानियों से बहुत कुछ सीख सकते हो — लेकिन तब, जब सही या गलत में नहीं जाओगे। सही में घुसे तो भी गए, गलत में गए तो भी — कभी खोज ही नहीं सकते कि वह सही है या गलत। सीखो और निकल लो। यहां ना कुछ सही है, ना गलत; सही और गलत ही फंसा रहा है।

प्रश्न: गुरुदेव, मुझे रात में पूरी रात नींद नहीं आती। क्या करूं? (P16-0031)

नींद नहीं आती है तो पहले आराम से नींद भर सोइए। और फिर अपने आप को — कहां राग-द्वेष में फंसे हो, कहां उलझने हैं — उससे निकालने का प्रयास करो। जज्बात और आवेश में आके वह मत करिए जो नहीं करना चाहिए; वह करिए जो करना चाहिए और आपके जीवन के लिए उचित हो।

प्रश्न: गुरु जी, आपकी दिनचर्या क्या होती है? कृपया बताएं। (P16-0032)

देखिए, अभी सत्संग कर रहा हूं। इसके बाद जाके भोजन करूंगा, फिर बर्तन मांजूंगा; बर्तन मांजने के बाद कुछ देर बातचीत, फिर आराम से विश्राम। सुबह उठूंगा — पहला काम है स्नान करने जाना; फिर खुद काढ़ा बना के पी लेना, और सत्संग चालू होता है। 12 के बाद कुछ हल्का नाश्ता, फिर दिन भर सत्संग, फिर रात को भोजन बनाओ, बर्तन मांजो — यही है जिंदगी, यही जीवन है। कपड़े वही एक ही हैं।

प्रश्न: गुरुदेव, समभाव क्या है? (P16-0033)

समभाव मतलब ना राग, ना द्वेष — ना किसी के प्रति लगाव, ना द्वेष-नफरत।

प्रश्न: बाबा जी, योग मार्ग क्या है? क्या इससे भी जीवन में स्पष्टता आती है?

(P16-0034)

योग मार्ग का मतलब होता है — जब आप अल्पाहार भोजन करते हैं तो जठराग्नि जलती है और आपके भोजन को तुरंत पका देती है; उसे पकाने के लिए कुछ नहीं रहता, तो आपके अंदर भूख की व्याकुलता बढ़ती है। भूख की व्याकुलता को आप देख पाते हो, तो धीरे-धीरे आपका लालच समाप्त होने लगता है। इसीलिए इंद्रियों की आहुति देने को बोला गया — जो यज्ञ-हवन किया जाता है, वह अंदर करना है। इसलिए कहा गया है कि अगर चार रोटी की भूख है तो एक हिस्सा रोटी, एक हिस्सा पानी, एक हिस्सा खाली सांस के लिए, और एक हिस्सा राम-राम भजन — तब भजन होगा, करना नहीं पड़ेगा; तब यह योग मार्ग है। पर पता चला आप यहां तक खा के बाहर बैठ के योग कर रहे हो — इस योग का कोई मतलब नहीं। योग मार्ग मतलब आंतरिक क्रियाएं करनी हैं, और यह तभी होगा जब आप अल्पाहार लेंगे — अपने आप होगा।

प्रश्न: गुरु जी, क्या कभी-कभी सही काम करने के लिए मजबूरी या परिस्थितिवश गलत काम करना सही है? (P16-0035)

गलत तो नहीं करना चाहिए। अगर मेरे कर्म से किसी को हानि हो, तो वह गलत नहीं करना चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, मैं मन से टूट गई हूं। क्या करूं? (P16-0036)

क्यों टूट गई हो, वह देखो, और उसे ठीक करने के लिए काम करो।

प्रश्न: महाराज जी, रोज नौकरी पे जाके ऐसा लगता है जैसे गुलामी की जिंदगी जी रहा हूं, ऊब गया हूं। जीवन में नयापन कैसे लाया जाए? (P16-0037)

कुछ बिजनेस करो, जहां पे आप स्वयं मालिक हो — कोई भी।

प्रश्न: गुरु जी, प्रेम-धन के लिए क्या करें? (P16-0038)

कुछ नहीं करना। कुछ मत करो, "कुछ नहीं चाहिए" में आ जाओ — बस बात खत्म हो जाएगी, तो प्रेम ही रहेगा, और कुछ नहीं रहेगा।

प्रश्न: गुरुदेव, आत्मज्ञान कैसा होता है? आपको आत्मज्ञान हो चुका है — कैसा होता है? (P16-0039)

जो मुक्त करा दे, वह आत्मज्ञान होता है।

प्रश्न: पढ़ा हुआ याद कैसे रखें? (P16-0040)

विद्यार्थी हो? तो उसे तब तक पढ़िए जब तक याद ना हो जाए, और कम खाना खाइए ताकि उसे कंठस्थ कर सको।

प्रश्न: महाराज जी, मुर्दा आदमी पानी में तैरता है और जिंदा डूब जाता है — ऐसा क्यों? (P16-0041)

इसका मतलब यह है कि जो था, उसमें अब वह नहीं रहा। तो ऐसे ही संसार में तैरना है तो बस "था" को खत्म करो, "है" को खत्म करो, और आने वाले "है" को — जो तुम बनना चाहते हो — उसे भी खत्म करो। तीनों को खत्म करना पड़ेगा। तीन-तीन को लेके आप घूम रहे हो, इसीलिए तो डूब रहे हो; एक लक्ष्य थोड़ी ना है आपका, इसलिए मनोदशा एकदम बिगड़ गई।

प्रश्न: धन्यवाद गुरु जी। मैं इंसानों का तो बहुत आदर करता हूं, लेकिन भगवानों में मेरी कोई आस्था नहीं है। (P16-0042)

कोई बात नहीं। आप सत्कर्म करिए, आगे बढ़िए। भगवान में आस्था रखने की क्या जरूरत है? ज्ञानधारी जीवन जियो, सत्कर्म करो और आगे बढ़ो — निकल लो।

प्रश्न: क्या घर पर सुनने पर भी वही लाभ मिलेगा, जो आपके साथ रहकर सुनने में मिलता है? (P16-0043)

कुछ दिन घर पे सुन लो, कुछ दिन आके यहां रह लो, और फिर घर पे जाओ — और देखो लाभ कम-ज्यादा है कि उतना ही है।

प्रश्न: गुरुदेव, मुझे आत्मज्ञान करना है। मैं क्या करूं? उसके लिए कोई रास्ता बताओ। (P16-0044)

क्या करना — करना छोड़ दो।

प्रश्न: गुरुदेव, मेरा नाती पूछ रहा है — मैं पढ़ने में कमजोर हूं, मुझे कुछ भी याद नहीं होता, कक्षा तीन में पढ़ता हूं। (P16-0045)

उससे पूछ के बताना — मैगी याद रहती है? चाउमीन, आइसक्रीम, चॉकलेट याद रहती है? मम्मी-पापा याद रहते हैं, गाना याद रहता है, मोबाइल चलाना याद रहता है, नमकीन खाना याद रहता है? अगर यह याद रहता है तो फिर पढ़ाई क्यों नहीं? जहां रुचि लगाएगा आदमी, वही याद रखेगा ना।

प्रश्न: गुरु जी, क्या पेड़-पौधों में भी आत्मा होती है? (P16-0046)

यह तो पेड़-पौधे बताएंगे। भावना होती है, यह तो सिद्ध हो चुका है। पर पहले तो आत्मा आप में है या नहीं, पहले वह देखो — यह पक्का हो पाया है क्या? आत्मा मेरे अंदर होती है, या मैं आत्मा हूं, या मैं शरीर हूं — यह पक्का नहीं, तो पेड़ में कहां जाएं? अपना ठिकाना नहीं, अब पेड़ पे कहां? बेमतलब की बातों में ना उलझो — सुनी-सुनाई बातें हैं; खोजो।

प्रश्न: अनंत ब्रह्मांड का मतलब क्या है? विस्तार से समझाएं। (P16-0047)

अनंत ब्रह्मांड का मतलब — गिना नहीं जा सकता। और गिना जा सकता है, तो इतना बोल दिया जाता है कि इतना है।

प्रश्न: क्या गवर्नमेंट को इनकम कम दिखाकर टैक्स बचाना ठीक है? क्योंकि पूरी इनकम दिखाने से ज्यादा कुछ नहीं बचता जिससे सब खर्चे चल सकें। (P16-0048)

यह भी बेईमानी है — एक तरह से गवर्नमेंट के साथ बेईमानी है।

प्रश्न: गुरु जी, अब तक आपसे यही समझा कि स्वयं की शुद्धतम अवस्था ही आत्मबोध है। थोड़ा प्रकाश डालें — क्या यह समझ गलत है? (P16-0049)

किस शुद्धतम अवस्था की बात कर रहे हैं — बाहरी की या आंतरिक की? आत्मबोध हो गया तो बातें खत्म हो गईं। जब पूरी तरह आप पवित्र हो जाते हैं, निर्विकार हो जाते हैं, उसी समय आपको आत्मबोध, आत्मज्ञान होता है। इस माने में सही है।

प्रश्न: गुरु जी, आप रामदेव वाला योग नहीं करवाते हैं? (P16-0050)

यहां कुछ नहीं करवाते भैया, भूल जाओ। यहां आत्मा-परमात्मा का योग होता है। यहां तो मन में जितनी भी बकवास भरी है, वह सब धीरे-धीरे खत्म होती है।

प्रश्न: विज्ञान के अनुसार तो हम केवल एक स्वयंचलित यंत्र हैं — कोई हमें चलाता नहीं। आध्यात्म इसके बारे में क्या कहता है? (P16-0051)

यही तो बात है — हमें लालच चला रहा है ना। अगर आप "कुछ नहीं चाहिए" में आ जाओ तो आप चल भी नहीं पाओगे, खत्म हो गए। कामनाएं आपको चला रही हैं।

प्रश्न: गुरुदेव, क्या ईश्वर की पूजा आदि ना करते हुए सिर्फ निष्काम कर्म से उस तक पहुंचा जा सकता है? (P16-0052)

हां, एकदम — ईमानदारी से जीवन जीते हुए। ईमानदारी जरूरी है, यह ध्यान रखना — ईमानदारी और सत्कर्म।

प्रश्न: क्या एक बार मोक्ष प्राप्त करने के बाद, सृष्टि के प्रलय के बाद जब परमात्मा अपना विस्तार फिर से करेंगे, तो क्या हम अपने स्वरूप में फिर से आ जाएंगे?

(P16-0053)

अब वह तो जब करेंगे, तब पता चलेगा। अभी तो निकलो। जिस देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में फंसे हो, वहां से पहले निकलो। भविष्य का कोई पता नहीं — बताओ कहां पहुंच गए, प्रलय काल!

प्रश्न: गुरु जी, आप हर बात में "मां नर्मदे हर" बोलते हैं, इसका क्या राज है? और क्या आप अभी भी मां काली की भक्ति-पूजा करते हैं? (P16-0054)

बस यह मेरा भाव है। मां काली के प्रति मेरा प्रेम है, पर अब मैं बाहर की ऐसी कोई भक्ति नहीं करता हूं — उससे मैं छूट गया हूं।

प्रश्न: गुरु जी, आपके जीवन का वह पॉइंट बताइए जहां से आप आध्यात्म से जुड़े; आध्यात्म से पहले और बाद आपकी क्या स्थिति रही, और आपके आत्मज्ञान का अनुभव क्या है? (P16-0055)

बस, बाद में तो कुछ नहीं चाहिए। और शुरुआत — समझ में आ गया था कि हम एक-दूसरे को जरूरत से मानते हैं, बस बात खत्म। यह हम बचपन में देख लिए थे।

प्रश्न: गुरु जी, "कलियुग केवल नाम अधारा" — इसका क्या रहस्य है? (P16-0056)

बस नाम लेके बैठ जाओ, और उठो तब जब उपलब्धि हो जाए; उसके पहले उठना भी मत। "कलियुग केवल नाम अधारा, सुमिर-सुमिर नर उतरहिं पारा" — जब तक पार उतर ना जाओ, तब तक जपते रहो; इसका मतलब यह है। ऐसे ही "सारे तीरथ बार-बार, गंगा सागर एक बार" — सारे तीरथ तब तक जाते रहो जब तक राग-द्वेष से मुक्त ना हो जाओ; राग-द्वेष से मुक्त हो गए तो गंगा सागर। अब लोग इसका मतलब निकालते हैं कि सारे तीर्थ मत जाओ, गंगा सागर गए तो सब तीर्थों का फल मिल गया — यही गड़बड़ है, आपने अपने मतलब से अपना अर्थ निकाल लिया। "तीरथ गए तो एक फल, संत मिले फल चार; सतगुरु मिले अनेक फल, कहे कबीर विचार।"

प्रश्न: आत्मज्ञान होने के बाद कौन भोगों की इच्छा करेगा या विवाह का ख्याल करेगा? (P16-0057)

आत्मज्ञानी के ऊपर कभी भी कोई जबरदस्ती नहीं कर सकता — यह बात का ध्यान रखना। देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में वह किसी प्रार्थना को स्वीकार कर सकता है, लेकिन स्वीकार उसका है, तभी वह कर रहा है; नहीं तो करवा कोई नहीं सकता। एक बार उसने अस्वीकार कर दिया, तो उसके टुकड़े कर दो — वह कभी डर-भय में नहीं आता; या तो हां, या तो ना।

प्रश्न: गुरु जी, शिव को पाना चाहते हैं तो क्या करें? (P16-0058)

बस जितना पाया है, उसे छोड़ दो।

प्रश्न: ज्ञान मिलने पर क्या गुरु भी छूट जाता है? (P16-0059)

गुरु शब्द छूट जाता है और वह सत् हो जाता है; जब किसी के लिए बोलता है तो सद्गुरु हो जाता है। लेकिन गुरु के प्रति भाव रहता है — ऐसा नहीं है कि वह भी छूट जाए।

प्रश्न: गुरु जी, धरती पर एक समय में कितने आत्मज्ञानी हो सकते हैं? क्या आपको भी पता चलता है कि दुनिया में और आत्मज्ञानी हैं — क्या आत्मज्ञानियों का आपस में कनेक्शन जुड़ता है? (P16-0060)

कुछ कहा नहीं जा सकता — ना ज्ञानियों को गिना जा सकता है, ना आत्मज्ञानियों को। अपुन डिस्कनेक्टेड — मुझे किसी से जोड़ना नहीं, मैं बस अपना काम करता हूँ; कोई आत्मज्ञानी हो, ब्रह्मज्ञानी हो, मुझसे कोई मतलब नहीं। ऐसा कोई प्रमाण नहीं कि आत्मज्ञानी आत्मज्ञानी के संपर्क में आ जाता है। जब वह उम्मीद से मुक्त हो गया तो कैसे कनेक्शन जोड़ेगा? कनेक्शन जोड़ने में उम्मीद आ जाएगी। "कुछ नहीं चाहिए" में आ गया तो क्यों कनेक्शन जोड़ेगा, जोड़ के क्या करेगा? वह वहां काम कर रहा होगा, हम यहां काम कर रहे हैं; सब अपने-अपने काम में लगे हैं।

प्रश्न: गुरुदेव, जब कोई आत्मज्ञानी हो जाता है तो क्या वह सिर्फ ज्ञान ही देता है?

(P16-0061)

और क्या करेगा? ज्ञान पे ही स्थिर हो जाता है। इस दुनिया में सबसे श्रेष्ठ है ज्ञान देना। भोजन दान, धन दान देने वालों की संख्या बहुत है; आत्मज्ञान का सत्संग सुनाने वालों की संख्या बहुत कम है — मैंने खुद देखा है, गिनती के छह-सात लोग; ज्यादातर कथावाचक ही मिलते हैं। इसलिए मैं यह काम कर रहा हूँ।

प्रश्न: क्या कर्ता भाव खत्म हो जाना ही आत्मज्ञान है? (P16-0062)

कर्ता भाव खत्म होने के बाद "कुछ नहीं" में आ जाओगे। अनुमान लगाना छोड़ दो, तो कर्ता का भाव बनेगा ही नहीं — वह तो तुरंत खत्म हो जाएगा। लेकिन पिछला नाश कैसे होगा? पिछला जब नाश हो जाएगा, निर्विकार हो जाओगे, तब आत्मज्ञान होगा।

प्रश्न: गुरुदेव, आप दिल में तो आते हो पर समझ में नहीं आते हो — राज खोलो।

(P16-0063)

दिल में आता हूँ, इतना कम है? समझ में अगर आ गया तो फिर दिल से निकाल दोगे — लेके क्या करोगे? खत्म हो जाओगे। इसलिए दिल में आता हूँ, वही बहुत है।

प्रश्न: मैं होशपूर्ण रहता हूँ — प्लीज बताएं, सही जा रहा हूँ कि नहीं? ईमानदारी में होश का क्या मतलब है? (P16-0064)

होशपूर्वक किसमें होश रखते हो — ईमानदारी में कि बेईमानी में? अगर ईमानदारी में रखते हो तो सही जा रहे हो; बेईमानी में रखते हो तो कहां जा रहे हो, पता है। ईमानदारी में ही होश रहता है; बेईमानी में होश बनाना पड़ता है। एक है होश बनाना, और एक है होश में रहना — ईमानदारी में होश में रहना होता है, और बेईमानी में होश बनाना पड़ता है, कई तरीके से प्लानिंग करते हो। तो होश में रहो, बनाओ मत। होश में रहने के बाद आप कर क्या रहे हो, मायने यह है — पता चला होश में रह के बेईमानी कर रहे हो, तो पतन होगा।

प्रश्न: क्या शादी अज्ञानता में ही होती है? (P16-0065)

ऐसा कुछ नहीं है, अपनी-अपनी समझ है। शादी कोई जरूरत में कर सकता है, कोई भोग में कर सकता है, कोई योग में भी कर सकता है। बोल नहीं सकते कि किस भाव में व्यक्ति शादी कर रहा है।

प्रश्न: गुरु जी, मौन व्रत क्या है? (P16-0066)

मौन व्रत — पांचों इंद्रियों से कोई मांग ना हो।

प्रश्न: गुरु जी, किसी जरूरतमंद को देखकर मन दुखी हो जाता है, पर किसी की खुशियों में मन कोई प्रतिक्रिया नहीं देता। क्या मुझ में कोई दोष तो नहीं है?

(P16-0067)

दुखी होके मन तो दुखी हो जाता है, लेकिन उस दुख को हटाने के लिए करते क्या हो — यह मायने है।

प्रश्न: गुरुदेव, ईमानदारी की क्या परिभाषा है? हर व्यक्ति की ईमानदारी की परिभाषा अलग-अलग है — कृपा करके विस्तार से बताएं। (P16-0068)

अलग-अलग नहीं है, ऐसा कुछ नहीं है। देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में फैसला लेना पड़ता है; बस कर्म करते हुए इतना ध्यान रखो कि छल, कपट, चोरी, बेईमानी, चापलूसी, मक्कारी, धूर्तता, पाखंड नहीं करना है, दिखावा नहीं करना है।

प्रश्न: आत्मज्ञानी क्या है और ज्ञानी क्या है? मेरा बेटा पूछ रहा है। (P16-0069)

ज्ञानी मतलब बाहर का ज्ञान — आपने किताबों से, शास्त्रों से अध्ययन किया है। आत्मज्ञानी मतलब स्वयं का ज्ञान — अनुभव, अनुभव से भी परे। जैसे किताब में आपने पढ़ लिया कि मिर्ची तीखी होती है, मिर्ची का चित्र देखा; और फिर पेड़ पे गए, मिर्ची तोड़ के खाई — तो तीखेपन का आत्मबोध आपको हो गया, यही है स्वयं का ज्ञान। अगर आपने सिर्फ सुन लिया, पढ़ लिया और खाया नहीं, तो एक ने कहा तीखी है, आपने मान ली; दो लोग आए, बोले मीठी है, आपने मीठी मान ली; सौ का झुंड आया, बोला दोनों झूठ बोल रहे हैं, खट्टी है। इसलिए मिर्ची ही खा लो — फिर पूरा विश्व बोले कि मीठी है, आप कहोगे मैंने चख ली, बात ही नहीं करोगे। जब तक नहीं खाओगे, बात चलती रहेगी। इसलिए स्वयं के ज्ञान को उपलब्ध हो जाओ, नहीं तो जीवन भर ऐसे दूसरों का ज्ञान ढूंढते रहोगे।

प्रश्न: गुरुदेव, आत्मज्ञान होने के बाद क्या आत्मज्ञान नष्ट होने की संभावना रहती है? (P16-0070)

एक बार कोई मां बन गई, तो क्या ऐसा हो सकता है कि वह फिर कुंवारी बन जाए?

प्रश्न: गुरु जी, क्या आप किसी को शक्तिपात करके भी आत्मज्ञान करा सकते हैं, जैसे विवेकानंद जी को हुआ था? अगर आपके पास कोई योग्य चेला हो तो? (P16-0071)

अभी तो मेरा ऐसा कोई भाव नहीं है। आगे का मुझे पता नहीं, क्योंकि मैं कुछ करने के प्रयास में नहीं हूँ।

प्रश्न: भगवान की प्राप्ति करना और आत्मज्ञान करना — दोनों में क्या फर्क है? (P16-0072)

आत्मज्ञान मतलब स्वयं का ज्ञान। और भगवान कभी भी प्राप्त नहीं किया जा सकता — इस भ्रम से दूर हो जाइए। जो प्राप्त है, उसे छोड़ा जा सकता है।

प्रश्न: गुरु जी, गंदे वीडियो देखना कैसे छोड़ें? (P16-0073)

बस छोड़ दो। देखो, क्यों देख रहे हो? सत्संग सुनो।

प्रश्न: महात्मा जी, यदि आपके सामने कोई आत्मज्ञानी आकर अनजान की तरह व्यवहार करे, तो क्या आपको पता चल जाएगा कि उसे आत्मज्ञान हुआ है?

(P16-0074)

मुझे मतलब ही नहीं है। मैं सीधा पूछता हूँ — सीखने वाले हो या सिखाने वाले? वह कहता है सीखने वाला, तो मैं बताता हूँ; कहता है सिखाने वाला, तो मैं कहता हूँ निकल लो — मुझे तो सीखना नहीं, तो फिर जरूरत क्या है, जाके काम करो। हमें मतलब ही नहीं कि आप आत्मज्ञानी हो कि अज्ञानी, मैं अपना काम कर रहा हूँ। मैं गिलास का पानी लेके बैठा हूँ — प्यासे हो तो पियो, प्यासे नहीं हो तो निकल लो; प्यासे नहीं तो यहां क्यों आए? सिखाने वाले हो तो सीधे से निकल लो और जाके संसार में समाज हित के लिए काम करो।

प्रश्न: गुरु जी, चित्त क्या है? यदि सरलता से समझाएं तो अति कृपा होगी।

(P16-0075)

जब कोई धक्का मार दे, अपमान कर दे — फिर आपको कितनी भी व्यवस्था दे दी जाए, छप्पन प्रकार का भोजन दिया जाए, आपका चित्त उसी में लगा रहेगा; इसे कहते हैं ध्यान का घटित हो जाना। धक्का मारा, चित्त लगा; लोगों के बीच अपमान कर दिया, तो कहीं भी रहो, चित्त उसी में लगा रहेगा — भोजन अच्छा नहीं लगेगा, नींद नहीं आएगी, नींद में भी वही याद आएगा। गहरा सुख या गहरा दुख जो आप नहीं चाहते थे, चित्त वहीं लगा रहेगा — इसे कहते हैं चित्त का लगना।

प्रश्न: गुरु जी, आत्मज्ञान होने के बाद बच्चों के पालन-पोषण के लिए अगर जॉब करनी पड़ जाए — आपका मार्गदर्शन चाहिए। (P16-0076)

एकदम करनी चाहिए।

प्रश्न: आप 100 कमरे बनाना चाहते हैं — यह सब आपकी इच्छा है। आप कहते हैं कि हमारी कोई इच्छा नहीं है। कृपया बताएं। (P16-0077)

इच्छा नहीं, जरूरत है — आप लोगों के लिए; जब यहां आओगे, समझ में आ जाएगा। यह कुटिया बनाई तो सोचा इतना काफी है, फिर कम पड़ने लगी, लोग बरगद के पेड़ के नीचे सोने लगे; अब हॉल बन रहा है, और मुझे पता है कि हॉल भी कम पड़ेगा। पहले एक शौचालय बनाया, फिर बुजुर्ग आने लगे जिनसे बैठा नहीं जाता, तो दूसरा बनाया। मैं पेड़ के नीचे बैठा होता और कहता यहीं सो जाओ, तो आप एक-दो दिन से ज्यादा नहीं रुक पाते; कंबल, पंखा, बाल्टी-लोटा — क्या-क्या घर से लेके आते? इसलिए हर व्यवस्था करनी पड़ती है — जरूरत में यह काम हो रहा है। बुद्ध ने भी चौमासे के लिए जमीन मांगी, एक व्यक्ति ने अपना सब बेचकर उस पर स्वर्ण मुद्राएं बिछवा दीं — सब ने ज्ञान के प्रचार के लिए समाज से लिया है। अगर कोई यहां आ रहा है तो मेरा कर्तव्य है उसे व्यवस्था देना। अतिथि देवो भव — अगर आप यहां आकर खुद बाजार से कंबल या राशन लाएं, तो मुझे यहां रहने का अधिकार नहीं; इसलिए किसी को यहां कुछ लाने नहीं देता, आपको क्या चाहिए मुझसे बोलिए। बस आप आत्मिक कल्याण के लिए साधना करो; जिम्मेदारी को ईमानदारी से निभाना ही साधना है। मैं तो 12 साल ऐसे ही घूमा — ना कभी हाथ में झोली ली; जहां मिल गया मिल गया, नहीं मिला कोई बात नहीं; दिसंबर-जनवरी में नदी किनारे पत्थरों पर कांपते-कांपते रातें बिताई। व्यवस्था जरूरत में की जा रही है।

प्रश्न: गुरु जी, आप खाली समय में क्या करते हैं? (P16-0078)

खाली समय हमारे पास है कहां कि खाली समय में कुछ करूं? रात को 11-12, एक-दो बज जाते हैं — यह नॉर्मल है; कम से कम 16-18 घंटे तो काम ही हो जाता है। खाली समय कहां बचा?

प्रश्न: गुरु जी, क्या एक आत्मज्ञानी दूसरे को अपने आत्मज्ञान से आत्मज्ञानी बना सकता है? (P16-0079)

अगर सामने वाले की स्थिति है — व्याकुलता है, तड़प है — तो वह कर सकता है, इतनी क्षमता उसमें होती है। लेकिन उसे खुद कुछ नहीं चाहिए; वह सामने वाले के ऊपर है, नहीं तो वह सबको बना देता। मिलाजुला के आपकी स्थिति क्या है, तभी कुछ हो सकता है।

प्रश्न: गुरु जी, आपने कहा कि भगवान को प्राप्त नहीं किया जा सकता — यह आपका अपना निष्कर्ष भी हो सकता है। मीरा ने कृष्ण प्राप्ति में स्वयं को सर्वस्व कर दिया, अतः उनको प्राप्त किया। (P16-0080)

ऐसे प्राप्त नहीं किया — प्राप्त हो गई। यही तो समझना है।

प्रश्न: गुरु जी, मुझे लगता है कि मुझे आत्मज्ञान हो गया है, पर मेरा शरीर-मन यह मानने को तैयार नहीं है। क्या करूं? मार्गदर्शन कीजिए। (P16-0081)

देखिए, आप काम करिए ना। आत्मज्ञान हो गया तो काम करिए।

प्रश्न: गुरु जी, क्या आपके दाहिने हाथ में चोट लगी थी? निशान है। (P16-0082)

चोट लगी नहीं थी, लगाई गई थी — घटना बता देता हूं। गुजरात में रहते थे; मैं बचपन से ऐसे ही हाथ पर छुरी चलाता था। दोस्त लोग आए, एक बोले "कहां काटना है, मैं काट देता हूं" — वे पिए हुए थे, उन्होंने ऐसे चलाई कि बहुत कट गया, बहुत खून गिरने लगा, लोग घबरा गए। मैं मुस्कराया, बोला कोई बात नहीं, इसको बांधो। डॉक्टर बोले यह तो पुलिस केस है; मैंने कहा ऐसा कुछ नहीं, और बाद में उन्हें पूरी सच्चाई बता दी। मैंने उनका नाम नहीं लिया, पूरा खर्चा भी खुद उठाया; वे भी बहुत पछताए, मैंने कहा पछताइए मत। एक भी आंसू नहीं आया, चेहरे पे मुस्कान थी — ना कोई अफसोस। हाथ की सारी नसें कट गई थीं, बस ब्रेन वाली नस बच गई थी। उस समय से इतनी बात समझ में आ गई: किसी पे विश्वास करो तो इतना करो कि विश्वास तक ही ठीक है — अंधविश्वास में मत जाओ, गला किसी के हाथ में मत दे दो।

प्रश्न: गुरु जी, जैसे आपको इतना कष्ट उठाने के बाद आत्मज्ञान हुआ, क्या हमें भी ऐसे ही भटक के होगा? (P16-0083)

आपको सीधा सत्संग मिल रहा है — बहुत सरल तरीके से आप लोग कर सकते हो। लेकिन जीना तो पड़ेगा।

प्रश्न: क्या खाली पेट भक्ति जरूरी है? भोजन भरपेट करने से भक्ति और आत्मिक जीवन पर असर कैसे होता है? (P16-0084)

करके देख लो। पेट भर भी खा के भक्ति करो, और कम खा के भी करो — आप जांच सकते हो। इसके लिए आपको काम करना पड़ेगा।

प्रश्न: अहंकार को त्यागने का सबसे आसान तरीका क्या है? (P16-0085)

कुछ बनने की इच्छा का त्याग करो। किसी को नीचा दिखाने की इच्छा का त्याग करो।

प्रश्न: गुरु जी, मैं हठयोग कैसे करूं जिससे मुझसे कोई गलती ना हो? (P16-0086)

बस ईमानदारी से जीवन जियो, बेईमानी का त्याग करो, सत्कर्म में लग जाओ।

प्रश्न: एक समय में आप वैक्सीन लाइन में थे — क्या वह भी आपके जीवन में आत्मज्ञान की स्थिति थी? (P16-0087)

अरे नहीं! आत्मज्ञान की स्थिति होती तो वैक्सीन क्यों भेजता, या वैक्सीन क्यों लगवाता?

प्रश्न: महाराज जी, बीज मंत्र का क्या महत्व है? (P16-0088)

देख लो, करके देख लो। मैं तो ईमानदारी और सत्कर्म का महत्व समझा हूँ।

प्रश्न: गुरुदेव, गीता का सार दो लाइन में बताइए। (P16-0089)

मेरा और कर्ता से मुक्त होने के लिए पूरी गीता बोली गई है। कर्ता से मुक्त होने के लिए अनुमान लगाना छोड़ दो, और मेरा से मुक्त होने के लिए "ठीक" शब्द का प्रयोग करो — ना अच्छा, ना बुरा। अच्छे में राग है, बुरे में द्वेष है; ठीक में तुम हो — ना राग है, ना द्वेष। बस "ठीक" शब्द का प्रयोग करो और अनुमान लगाना छोड़ दो — यह पूरी गीता का सार है। गीता पढ़ने के बाद समझ लेना या अभी समझ लो, आपके ऊपर है।

प्रश्न: श्रावक बनकर, दुनियादारी में रहकर मुक्ति संभव है, या साधना जरूरी है?

(P16-0090)

सबसे जरूरी है ईमानदारी — तुरंत मुक्ति। और सत्कर्म अपना के आगे बढ़ जाओ।

प्रश्न: गुरुदेव, आपके जीवन की कोई ऐसी सीख बताइए जो साधकों को राह दिखाए। (P16-0091)

ईमानदारी से जीवन जियो और जरूरतमंद की सेवा में लगे रहो — जिस लायक आप हो, उस लायक — बस बिना आवरण देखे। यही है साधना; यही मैंने सीखा, यही मैंने समझा।

प्रश्न: अपनों की कुटिया में रहकर साधना करने पर आगे के प्रारब्ध नहीं बनेंगे, पर पुराने कैसे कटते हैं? कृपया मार्गदर्शन करें। (P16-0092)

अगर नए नहीं बनेंगे तो पुराने कट रहे हैं, क्योंकि इस संसार का नियम है — परिवर्तनशील संसार है, तो पुराने अपने आप खत्म हो रहे हैं। जैसे वाल्मीकि जी के नए नहीं बने — "वाल्मीकि भए ब्रह्म समाना"।

प्रश्न: महाराज जी, बेईमानी से आपका क्या मतलब है? (P16-0093)

मेरा क्या मतलब है — आपका भी तो मतलब है। बेईमानी नहीं करते हो क्या? अगर बेईमानी के बारे में आपको कुछ नहीं पता, तो फिर पता करने की कोई आवश्यकता नहीं है — तब तो आप जिंदगी को जियो, फर्स्ट क्लास। एक नई जानकारी लेके क्या करोगे? इतनी जानकारीयों ने वैसे ही परेशान किया है।

प्रश्न: जब किसी चीज की जरूरत है ही नहीं, तो फिर भगवान की तलाश क्यों?

(P16-0094)

तो कहां कोई कह रहा है कि भगवान की तलाश कर?

प्रश्न: गुरु जी, ध्यान क्या है? (P16-0095)

"क्या है" से परे है जो करा दे, वह ध्यान है — आपका स्वयं का। फिर ध्यान भी छूट जाएगा।

प्रश्न: गुरु को कैसे प्राप्त करें या ढूंढें? कृपया मार्गदर्शन करें। (P16-0096)

आत्मिक कल्याण के लिए मार्ग पूछो — गुरु मिल जाएगा।

प्रश्न: ऋषियों को मंत्र-दृष्टा के रूप में जाना जाता है — जिन्होंने मंत्रों को सीधे भगवान या अलौकिक शक्ति से देखा या प्राप्त किया। हम इसे कैसे कर सकते हैं?

(P16-0097)

मैं आपको कर्म कैसे करना है, वह बता रहा हूँ — ईमानदारी से जीवन जियो, सत्कर्म करो और आगे बढ़ो।

प्रश्न: गुरुदेव, मैंने ऐसा पढ़ा है कि पात्र शिष्य को गुरु स्वयं खोजते हैं। क्या यह सही है? (P16-0098)

हम लोग गुरु को खोजते हैं। जिसे जरूरत है, वही खोजेगा ना।

प्रश्न: जीवन का उद्देश्य क्या है, और आपका उद्देश्य क्या है? (P16-0099)

मेरा अब कोई उद्देश्य नहीं है। और आपका जो उद्देश्य है, वह देख लो — उस पे काम करो।

प्रश्न: योगी जी, प्रोफेसर साहब ने विवेकानंद जी और निवेदिता की कहानी सुनाई — वह सब कुछ छोड़कर आई, अपमान सहा, फिर भी टिकी रही और आखिर में विवेकानंद जी ने अपना पूरा ज्ञान उसे दे दिया। जैसे गोयल साहब 82 साल की उम्र में सब कुछ छोड़कर आपके सानिध्य में आए हैं। तो क्या ये चीजें आखिरी क्षणों में हमारी पात्रता पर निर्भर करती हैं या गुरु की कृपा पर? (P16-0100)

इस कहानी का पहले सार समझिए। वो सब कुछ छोड़ के किस उद्देश्य से आई थी — अपना आत्मिक कल्याण करने या समाज के लिए कुछ करने? फिर स्वामी विवेकानंद ने उन्हें किसी काम में लगाया। अब उस काम में कोई उम्मीद रख ली कि काम तो मैं कर रही हूं लेकिन मुझे इज्जत भी चाहिए, सम्मान भी चाहिए। वो उन्हें नहीं मिला और वो अशांत हो गई। एक तो वहां से अशांत, फिर स्वामी विवेकानंद ने झापड़ मारा और बोले भाग जाओ। लेकिन इतने अपमान के बाद भी वो टिकी रहीं, वहीं रहीं। इसका मतलब उनकी योग्यता हो गई, और उन्होंने उन्हें उस स्थिति में ला दिया कि अब समाज के लिए तुम काम कर सकती हो — क्योंकि समाज में बड़ा दुत्कार है। जैसे मेरे साथ नहीं हो रहा? इतना काम करने के बाद भी कितना सुनना पड़ रहा है, ये तो आप प्रत्यक्ष देख पा रहे हो। इतना अपमान सहने के बाद भी मैं काम कर रहा हूं, क्योंकि मुझे कोई उम्मीद नहीं है — सम्मान का, नाम का, शोहरत का, पैसे का कोई उम्मीद नहीं है। तो उन्होंने पहले उनकी पूरी परीक्षा ली कि तुम सब कुछ छोड़ चुकी हो, क्या तुम सच में आई हो? सच में आई थी, इसलिए तो वापस नहीं गई। जब वो पूरी तरह परीक्षा में पास हो गई, फिर उनको दे दिया और वो फैला दीं। और स्वामी विवेकानंद परीक्षा में पास हो गए तो रामकृष्ण परमहंस ने उन्हें सब दे दिया। तो गुरु तो इंतजार कर रहा है कि कोई ऐसा पात्र आए जिसमें मैं भर दूं। ऐसी पात्रता है तो गुरु भर ही देगा। गुरु तो लेके इंतजार में बैठा है, उसके काम का है ही नहीं। उसको तो जहां पहुंचना था पहुंच गया, उसे अब कुछ नहीं चाहिए। उसके पास जितना है, वह एक योग्य व्यक्ति का इंतजार कर रहा है कि कोई आए और मैं उसे दे दूं, वह समाज में बांटे। तो दिया तो उनकी योग्यता के ऊपर दिया, उनकी पात्रता के ऊपर दिया।

प्रश्न: (साधिका ने महात्मा बुद्ध के उस भिक्षु की कहानी सुनाई जो गाली, थप्पड़, डंडे, यहां तक कि मृत्यु सहने को भी तैयार था, ताकि ज्ञान फैला सके।) अगर हम उसकी जगह होते तो मैं भी यही करती, क्योंकि मैं खुद आई हूं, किसी ने बुलाया नहीं। फिर निवेदिता अपमान से क्यों टूट गई? (P16-0101)

अब यहां पे देखिए — आपने भिक्षु की कहानी सुनाई, इन्होंने निवेदिता की कहानी सुनाई। एक उपलब्ध हो चुका था और एक उपलब्ध नहीं था। एक की उपलब्धि हो गई थी, तो उपलब्धि के बाद तो ये भाव आ ही जाएगा। समाज सुधारक जो होते हैं वो उपलब्धि को प्राप्त नहीं होते; वो समाज सुधार के लिए काम करते हैं, आत्मिक कल्याण के लिए नहीं। वो भिक्षु आत्मिक कल्याण की स्थिति में पहुंच चुका था, उसमें क्षमता आ गई थी। तो क्षमता आने के बाद इस भाव को व्यक्त करना कोई जटिल नहीं है, क्योंकि वो उस स्थिति में आ ही गया। और निवेदिता तो वहां आई ही नहीं थी, वो तो अज्ञानता में जकड़ी हुई थी। इस स्थिति में भी उन्होंने अपने पे संयम रखा और भागी नहीं — परीक्षा में पास हुई। भिक्षु तो परीक्षा में पास ही हो जाएंगे, क्योंकि उपलब्धि के बाद की बात थी। समझिएगा इस बात को — अज्ञानता में अपने आप को स्थिर रखना इतना आसान नहीं है। तो मैं यही कह रहा हूं कि उपलब्धि के पहले संयम और धैर्य बनाए रखना इतना आसान नहीं है।

प्रश्न: आरुणि की कहानी में गुरु ने उसे बांध लगाने भेजा, वह पूरी रात खुद को पानी के आगे रखकर पड़ा रहा, शरीर नीला पड़ गया, और उसके बाद उसे आत्मज्ञान हुआ। उसे आत्मज्ञान नहीं था, लेकिन गुरु वाक्य ने उसकी पात्रता को जगाया। तो उसे ज्ञान क्यों हुआ? (P16-0102)

देखिए, गुरु ने जितना कहा उसको करने के लिए उसने प्राण-शरीर लगा दिया। हमारे पास तीन ताकत होती है — धन, तन और हमारी समझ। आपके पास क्या है वो आपके ऊपर है। जब आप पूरी तरह लगा देते हो, कुछ बचता ही नहीं, उसके बाद ही ज्ञान होता है। तो उस लड़के ने अपना सब लगा दिया, गुरु आज्ञा में सब लगा दिया, क्योंकि उसके पास दो ही था — धन तो नहीं, उसके पास तन था और प्राण था। तो उसने दोनों लगा दिए और उसे ज्ञान हो गया। अब ये गुरु की पहली आज्ञा नहीं होगी। वो तो आज्ञा पे आज्ञा, आज्ञा पे आज्ञा — इस तरह से लायक बन गया। और जब लगता है कि अब इसे निकाल ही देना है, तो उसे ऐसी आज्ञा दे देता है। क्योंकि जब तक उसमें बल रहेगा तब तक ज्ञान नहीं होगा। तो गुरु आपके बल को खत्म करता है। आप कोई काम कर रहे हो — क्या उस काम की जरूरत गुरु को है? नहीं, समाज को है। गुरु उस कार्य के द्वारा आपके बल को खत्म करता है। उसे ही क्यों भेजा? क्या गुरु सो गया? गुरु समझकर जाग रहा था कि आज उपलब्धि होने वाली है। अगर वो ना लौटता तो क्या गुरु और लोगों को नहीं भेज देता, बुला नहीं लेता? क्या गुरु भूल सकता है? लेकिन गुरु यह देख रहा है कि अगर आज वो रुक गया तो उपलब्धि पक्की। गुरु को अगर पानी ही रोकना होता तो सारे शिष्यों को ले चल देता; अकेले उसको ही क्यों भेजता? वो सिर्फ पानी रोकने के लिए नहीं भेजा था, उसको उपलब्धि होने के लिए भेजा था। गुरु ने देखा कि इसने हर आज्ञा का पालन किया है, यह सब कुछ लगा देता है — अभी तक इसने समझ लगाई है, शरीर लगा दिया है; क्या प्राण भी लगा सकता है? क्योंकि प्राण आखिरी है। तो वो रोकता ही रहा। गुरु से आके ये नहीं कहा कि नहीं रुक रहा है, शिकायत नहीं की, अपनी समझ का उपयोग नहीं किया — वो पूरी तरह लग गया, जितना मेरे से हो सके। और पूरी तरह लगने में वो खत्म हो गया, और जब वो खत्म हो गया तो ज्ञान ही होगा। गुरु को ये बात पता थी कि आज इसकी उपलब्धि का दिन है, बाढ़ सिर्फ निमित्त है। इसीलिए तो कहा गया है गुरु वाक्य ब्रह्म वाक्य — गुरु की आज्ञा आखिरी आज्ञा।

प्रश्न: मतलब मेरा बल क्या है? मेरी जो छोटी-मोटी समझ है, वही मुझे अटकाए हुए है? (P16-0103)

आपका धन, आपका शरीर, आपकी समझ — ये आपका बल है। और ये जब तक आपके पास रहेगा, आपको ज्ञान नहीं होगा। तो गुरु आपके बल को खत्म करता है, क्योंकि जब आपका बल खत्म होगा तब आप अपने आप में स्थिर हो जाओगे। जब तक आप में बल है, आप बाहर ही घूमते रह जाओगे। इसलिए आप जितना बोलते हो, गुरु सबको खत्म कर देता है। गुरु यही बताता है कि तुम कुछ नहीं जानते, क्योंकि जब तक तुम कुछ जानते हो तब तक भटकते रहोगे। गुरु तुम्हें जानने से मुक्त कराता है, तुम्हारी सारी समझ को खत्म कर देता है। क्योंकि जब तक आपका बल है, आपके लिए संसार है। गुरु आपको उस जगह भी भेजेगा जहां आपको अथाह पीड़ा होगी, क्योंकि अथाह पीड़ा में ही आपका बल खत्म होगा। अथाह दुख होगा, अथाह अपमान होगा, क्योंकि जब तक आपको मान मिलेगा तब तक आपका बल एकदम खत्म नहीं होगा। अगर आप अपनी समझ से गुरु को देखो तो गुरु आपके लिए एक बेवकूफ हो जाएगा — कि इससे ज्यादा तो मैं जानता हूं, मुझे बैठना भी आता है, उठना भी आता है, यह तो एक गंवार की तरह रहता है, इससे अच्छा काम तो मैं कर सकता हूं। इसलिए गुरु के पास इसलिए जाइए कि अपनी समझ से मैं कैसे मुक्त हो जाऊं। गुरु के पास आप अपनी समझ विकसित करने मत जाओ, क्योंकि अपनी समझ तो आप अपनी समझ से ही विकसित करोगे। गुरु के पास इसलिए जाओ कि मेरी समझ से मुझे मुक्त करो, यह मेरी समझ ही मेरे दुखों का कारण है। जितना इसको विकसित करूंगा उतना दुख बढ़ेगा। आज मैंने अपनी समझ से ही अपने को वहां ला के खड़ा कर दिया जहां मैं अशांत हूं, दुखी हूं, निराश हूं, व्याकुल हूं, घुटन में हूं, बेचैनी में हूं। तो मेरी समझ से मुझे मुक्त करो, और यह तुम ही कर सकते हो, क्योंकि मेरे पास ये क्षमता नहीं है; मुझे क्या करना है वो बोलो। इसीलिए गुरुओं के पास बहुत कम लोग टिकते हैं — जाते लाखों लोग हैं, टिकते इक्का-दुक्का हैं। कौन टिकता है? जो अपनी समझ से मुक्त होना चाहता है। जितने लोग अपनी समझ से गुरु को जांचते हैं या समझ को विकसित करना चाहते हैं, वो वापस चले जाते हैं। और जो कहते हैं कि बस अब मैं अपनी समझ से भी मुक्त होना चाहता हूं, क्योंकि जितना मैंने समझा उतना मैं भटका — वो टिक जाते हैं और उनका कल्याण हो जाता है। इतिहास में देखिए — कृष्ण, अष्टावक्र, गुरु नानक जी, कबीर, बुद्ध — उनके पास गिनती के लोग रुके। जब वो जीवित थे तब कम रुकते हैं; जब वो चले जाते हैं तो भीड़ इकट्ठी हो जाती है, क्योंकि उनके नाम से लोग अपने मैं को खड़ा करते हैं, व्यापार करते हैं। वो उनके ज्ञान का प्रचार नहीं करते, उनके ज्ञान पे चलते भी नहीं; प्रचार भी इसलिए करते हैं कि नाम, शोहरत, पैसा मिलता है। अगर उनके प्रति जरा सी भी आस्था,

समर्पण होता, तो उनके ज्ञान के द्वारा उस स्थिति पर होकर ज्ञान देता, रटी-रटाई बात कभी नहीं बोलता। क्योंकि ज्ञान देने का अधिकारी वही है जो ज्ञान को उपलब्ध हो जाए।

प्रश्न: आपका कहना था कि गुरु के प्रति हो जाए, लेकिन हमें तो शुरू में पता नहीं चलेगा ना कि कौन आत्मज्ञानी हो गया? (P16-0104)

जिज्ञासु रहोगे — हां, आप जिज्ञासु रहोगे तो आपको आत्मज्ञानी ही मिलेगा। आखिरी में वहीं टिकोगे, और कहीं टिकोगे ही नहीं। जैसी आपकी मांग रहेगी, आप वहीं पहुंच जाओगे। ये नकली-असली आपकी जिज्ञासा ही बताएगी। आपकी जिज्ञासा ही आपको लेके जाएगी; आपकी जैसी मांग, आप वहां चले जाओ।

प्रश्न: "कुछ नहीं चाहिए" की स्थिति में आना है, तो ऐसा लगता है कि सब कुछ बेच देना है, कुछ भी पास नहीं रहेगा। फिर खाने-पीने का कैसे करेंगे? (P16-0105)

"कुछ नहीं चाहिए" में आने के लिए — मान की इच्छा, योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा, बड़ा बनने की इच्छा, दिखावा — ये छोड़ना है। ये छूट जाएगा तो आप "कुछ नहीं चाहिए" में आ जाओगी। ये चार हैं हमारे पास, और इन चार से मैं समाज में खड़ा हूँ। चार हटा दो तो आपका अस्तित्व खत्म, आप अपने आप में स्थिर होने लगोगे। खाने-पीने को लगेगा, वो तो जरूरत है; रहने को घर लेना पड़ेगा। इस तरह से तुम पहले प्रत्यक्ष ज्ञान को समझो। अभी आप पूरी तरह समझ नहीं पाए। यहां पे मानसिक छोड़ने की जरूरत है। और मैंने पकड़ा क्या है? चार — मान की इच्छा, योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा, बड़ा बनने की इच्छा, दिखावा। इन चार के अलावा हमारे पास कुछ नहीं है, लेकिन इन चार से मैं हूँ। चार छोड़ दूँ तो मैं खत्म; मुझे कोई कुछ पूछेगा भी नहीं और ना मैं किसी को पूछूँगा। ऐसा लगेगा जिंदगी खत्म हो गई, मैं जिंदा मुर्दे के समान हो गया — आप यहां पर आकर खड़े हो जाओगे। तो ये चार छोड़ो, इन चार पे काम करो, और कर लो अपना कल्याण।

प्रश्न: यहां एक-एक दिन निकालना मुश्किल लग रहा है। पता नहीं, कभी ऐसे माहौल में रहे ही नहीं। (P16-0106)

यहां तो और शांति है, एकदम। मुश्किल क्यों लग रहा है? यहां तो अपने आप में होने का पूरा मौका है। इसका जवाब आप दो — यहां तो आपके लिए पूरा एकांत है, तो मुश्किल क्यों लग रहा है? ऐसा एकांत जीवन में मिला नहीं, और इतना एकांत है कि मैं अपने आप को बर्दाश्त नहीं कर पा रहा हूं। जिस शांति की तलाश थी, जिस एकांत की तलाश थी, वो यहां है; अब वो बर्दाश्त नहीं हो रहा है, क्योंकि इच्छा तो थी ऐसा एकांत, ऐसी शांति मिले, लेकिन उसमें कभी जिया नहीं। जब से आप समझने लायक हुए, पहली बार ऐसा होगा, वही बर्दाश्त नहीं होता। कोई बात नहीं, उसे बर्दाश्त करो। इसी में आपका कल्याण छिपा हुआ है — यही तो बर्दाश्त करना है, अपना होना। यहां तो आप ही हो, फिर बर्दाश्त क्यों नहीं हो रहा? अपने आप को ही बर्दाश्त नहीं कर पा रहे। हम सबको बर्दाश्त कर लेते हैं, अपने आप को नहीं कर पाते। इसीलिए मैंने इस जगह पे ऐसा एकांत किया। जीवन में सबको बर्दाश्त कर लिया, लेकिन परम शांति तो आप में है। आपने जिसको बर्दाश्त किया उसने आपको यूज़ किया, आपने उसे यूज़ किया। अब आपको अपने आप में होना है — अब अपना सामना करो, अपने आप में स्थिर हो जाओ। आप देखो कि मैं क्यों नहीं बर्दाश्त कर पा रहा हूं, जबकि यही तो मुझे चाहिए था। इतने सालों तक सबके साथ मस्ती से जिया, और आज सात दिन मैं अपने आप में नहीं रह पा रहा, जबकि मुझे कुछ करना ही नहीं — तो देखो, करना कितना आसान है, लोगों का साथ कितना आसान है, और अपना साथ? इसलिए सामना करो और अपने आप से प्रश्न करो — मैं क्यों नहीं रुक पा रहा हूं? क्यों मैं भागना चाहता हूं? इसलिए तो मैंने सात दिन रखा, नहीं तो आप लोग एक-दो दिन में ही भाग जाते। सात दिन में बहुत कुछ समझ में आएगा। यहां हम कोई अपनी सेवा थोड़ी ना करवाते हैं, अपना काम खुद करते हैं; सात दिन तुम्हें तुम्हारे साथ रहने का पूरा मौका देता हूं, कि देख पाओ अपने आप को, अपनी बेचैनी को, अपनी घुटन को। यहां कुछ सोचना ही नहीं है, सारी व्यवस्थाएं हैं, बस व्यवस्था का उपयोग करके अपने साथ रहना है — और इतनी घुटन क्यों? जैसा जीवन में चाह रहे थे वैसी जगह मिली, सत्संग मिला, फिर क्यों भागना चाहता हूं? वहां रस है — रस की आदत लगी है। इतने सालों तक दुनिया में रहने में तकलीफ नहीं हुई, क्योंकि वहां कुछ बन रहा था — तुम्हारे द्वारा कोई अपने मैं को खड़ा कर रहा था, तुम किसी के द्वारा अपने मैं को खड़ा कर रहे थे। यहां ऐसा कुछ नहीं है, यहां किसी के सामने तुम्हारा मैं खड़ा ही नहीं होगा। घुटन भी एक सोच है ना। यहां यह नहीं सोचना कि भोजन कैसे बनेगा, व्यवस्था कैसे है; सिर्फ यही सोचना है कि मेरा कल्याण कैसे हो जाए। तो इसमें घुटन क्यों? अपने आप से प्रश्न करो — क्यों? पहली बार तो प्रॉब्लम आती है। देखो कि पूरा एकांत है, जंगल है, नेचर है

— जैसा मैं चाहता था जीवन ने वैसा मौका दिया, फिर मैं भाग क्यों रहा हूँ? मेरी आदतें ही बार-बार भगा रही हैं। लग जाओ अपने कल्याण में।

प्रश्न: कर्म भी ऐसे किए हैं... (P16-0107)

कोई बात नहीं, कर्म हुआ सो हुआ। अब हम कर्म भोगने के लिए भी तैयार हैं, उसके लिए पश्चाताप भी हो रहा है, और मैं धीरे-धीरे छूट जाऊंगा। देश, काल, स्थिति-परिस्थिति में कभी-कभी जो हम नहीं चाहते वह भी कर्म करना पड़ता है, कभी जो चाहते हैं वह भी करना पड़ता है। कभी हमारी उतनी समझ नहीं रहती कि इसका परिणाम इतना भयानक होगा, हम सोचते हैं अपने आप को बचा लेंगे। तो बहुत सारी स्थिति-परिस्थिति के द्वारा कर्म हो जाता है। कोई बात नहीं, कल्याण हो ही जाएगा। रत्नाकर जैसे डाकू ने कितनों को लूटा, अंगुलिमाल ने कितनों की उंगलियां काट लीं — रत्नाकर वाल्मीकि ब्रह्म समान हो गए। तुमने तो वैसा नहीं किया है ना? जब ऐसे लोगों का कल्याण हो सकता है तो आपका भी होगा। हां, ये है कि उन्होंने जब समझा तो पूरी तरह पिछला छोड़ के आगे बढ़ गए। उन्होंने ये नहीं कहा कि मैं प्रयास करूंगा; बोले अभी इसी वक्त मैं सब छोड़ता हूँ, और उनका कल्याण हो गया। तो आप भी तुरंत छोड़ दो। जो हुआ वो आप भोग लो, काट लो, कोई बात नहीं। वो तैयार हो गए, और जब तैयार हुए तो तुरंत सब पिछला छोड़ दिया; गुरु ने जैसा कहा तुरंत अपना लिया। आपको मार्ग मिल गया है, अब चल पड़ो — प्लानिंग मत करो, प्रयास मत करो, चल पड़ोगे तो कल्याण हो जाएगा। ऐसे-ऐसे लोगों का कल्याण क्यों हुआ? क्योंकि जब गुरु मिला तो वो तुरंत छोड़ के चल दिए। लेकिन मैं जिज्ञासु में क्या देख रहा हूँ — ये इधर समझ भी रहा है, कह भी रहा है कि मुझे जो चाहिए मिल गया, मार्ग मिल गया, लेकिन पिछला छोड़ नहीं पा रहा। तो छोड़ना नहीं चाहता। अगर तूने किसी चीज को पकड़ा है, इसका मतलब पकड़ने की ताकत है, तो उसे छोड़ने की भी ताकत है। तो जब गुरु मार्ग बता रहा है तो छोड़ दो, प्रयास मत करो। वो कह रहा है ईमानदारी, सत्कर्म, सत्संग अपना लो। ये मत कहो कि मैं ईमानदारी के लिए भी प्रयास कर रहा हूँ — ऐसा ना हो प्रयास में ही जिंदगी चली जाए। जो आपके हाथ में है, उसके लिए भी प्रयास कर रहे हो, तो फिर तो आप नकली हो ना। ईमानदारी किसी और के हाथ में थोड़ी ना है।

प्रश्न: मेरा मतलब था कि कर रहा हूं, चल रहा हूं, लेकिन कभी-कभार कुछ ना कुछ ऐसा हो जाता है जो नहीं होना चाहिए। (P16-0108)

नहीं होना चाहिए ना — तो नहीं होना चाहिए। हर वक्त, हर क्षण, हर पल सचेत रहना पड़ेगा। अब पूरी तरह ईमानदारी जीवन में अपना लो। आप चाहोगे तो आपका कल्याण पक्का है, और अगर नहीं चाहोगे तो फिर कुछ नहीं होगा। किसी के प्रयास से थोड़ी ना कुछ होगा। अर्जुन ने अपना कल्याण चाहा तो कृष्ण भगवान के द्वारा हो गया; और दुर्योधन के लिए बहुत प्रयास किया, उसने नहीं चाहा तो उसका नहीं हुआ। आप अगर चाहोगे तो दुनिया की कोई ताकत रोक नहीं सकती, हर ताकत आपकी सहायता करेगी। जब उस परम सत्ता से मिलने जा रहे हो, तो कौन रोक सकता है? हम ही रोक लेते हैं। अगर देश के राजा ने स्वीकार कर लिया कि चल आजा, तो क्या किसी की ताकत है कि आपको रास्ते में रोक सके? इस संसार में भी जो हमने चाहा वो पाया — पहले चाहा, जरूरत समझी, फिर उसके लिए काम किया, मेहनत की, तब पाया। तो इसके लिए भी तो मेहनत करनी पड़ेगी, काम करना पड़ेगा। यही मेहनत है — एक-एक दिन एकांत में जीना। अपना कल्याण कर लो, अब पूरी तरह लग जाओ। दूसरे से बातें करना बहुत आसान है; जब ग्राउंड में उतरते हैं फिर पता चलता है।

प्रश्न: आपसे बात करने में डर लगता है। जैसे ही बोलने लगता हूं, रोना आ जाता है, गला भर आता है। लगता है कोई गलती ना हो जाए। (P16-0109)

क्यों डर लगता है? डर के पीछे कोई कारण होगा। यहां गलती करने के लिए तो कुछ है ही नहीं; डरना नहीं चाहिए ना। डर किस बात का? अपना कल्याण करो। गलतियां तो होती हैं — अपराध ना हो, जानबूझकर करना ना हो। गलतियां तो हो ही जाती हैं, क्योंकि हम सीखने वाले हैं; हमसे हजारों गलतियां हो सकती हैं। कभी सही होगा, कभी गलत होगा। तो गलतियां हो जाएं, हो जाएं, लेकिन समझ के अपराध ना हो। अब डरना मत, डर को हटाओ, खुल के बात करो। और जिसके सामने डर है, वहां डर का कारण जानो — क्या सच में वो डरा के रख रहा है? तब तो वो गुलाम बना लेगा। लेकिन अगर डर का कारण वो नहीं है, सिर्फ मैं हूं, मेरा भ्रम है, तो उस भ्रम को हटाओ और खुल के बात करो। दबाव-संकोच में कल्याण नहीं होता है। दबाव-संकोच को हटाओ और खुल के बात करो।

प्रश्न: मैं बेईमान होके ही जी रहा था, अब थोड़ा-थोड़ा ईमानदारी में आ रहा हूं। कई बार कुछ कर्म करने के बाद समझ आती है कि ऐसे नहीं, ऐसे करना चाहिए।

(P16-0110)

अब पूरी तरह आ जाओ। ईमानदार तो ईमानदार हो जाओ — परसेंटेज में नहीं। पीछे जो हुआ, छोड़ दो, लेकिन अभी से ईमानदारी से जीवन जीना शुरू कर दो, कि मैं कह सकूं कि अब मैं पूरी तरह ईमानदारी से जीता हूं। थोड़ा-बहुत नहीं; अगर मैं थोड़ा-बहुत बदलता हूं तो मैं वैसे का वैसा हूं, कोई मतलब नहीं है। या तो ईमानदार, या तो बेईमान — थोड़ा-बहुत नहीं है। नाव में चाहे एक छेद हो चाहे 99, परिणाम दोनों का एक ही आएगा ना।

प्रश्न: इस दुनिया में इस ज्ञान के साथ जीना बहुत मुश्किल हो रहा है। (P16-0111)

लेकिन जी तो सकते हैं। मैं भी तो इसी दुनिया में काम कर रहा हूँ, देख रहे हो — यही दुनिया के लोग हैं, इन्हीं के लिए कर रहा हूँ, इनके साथ ही कर रहा हूँ। तो बड़े आराम से ईमानदारी से जी सकते हो, क्योंकि ईमानदारी आपका मूल स्वभाव है। बेईमानी तो आपने जबरदस्ती अपने से करवाई है — आप थोड़ी चाहते थे, लेकिन मान के चक्कर में, बड़ा बनने के चक्कर में, आगे बढ़ने के चक्कर में, एक सोसाइटी में टेन करने के चक्कर में बेईमानी कर बैठे। ईमानदारी के लिए तो कोई प्रयास ही नहीं करना है, प्रयास तो बेईमानी के लिए करना पड़ता है। तो आप बेईमानी करना छोड़ दो बस; ईमानदारी तो आपके कर्म में स्वाभाविक होती है। ईमानदारी आग है, तभी तो सारे बंधनों को जला देगी। सत्कर्म घी का काम करता है, और सत्संग यह समझ देता है कि क्या जलाना है — क्या छोड़ना है, क्या पकड़ना है। तो हमें निकलने के लिए ईमानदारी, सत्कर्म, सत्संग ये तीनों चाहिए। सत्संग मतलब सत्य तक पहुँचने वाले से निकला हुआ ज्ञान; वही सत्य तक ले जाएगा। अगर हम उसके शब्दों में जी रहे हैं तो हम उसके संग हैं। तो इसको लेकर आगे बढ़ जाओ, अपना कल्याण कर लो। ये मिल ही गया है, अब खोजना भी नहीं है, अब इस पे चलना है। अभी समझ भी है, समय भी है — ऐसा ना हो कि समझ है और समय चला जाए। पता नहीं अगला सांस हम ले पाएँ कि नहीं, लेकिन अगर शरीर छूटे तो यह कह सकें कि हमने ईमानदारी में छोड़ा; अगला शरीर लें तो ईमानदारी से जिएँ। जब तक लेन-देन से मुक्त नहीं होंगे, शरीर तो लेना पड़ेगा; तो मैं ईमानदार बनके लूँ, बेईमान बन के शरीर धारण ना करूँ, क्योंकि हमारे कर्म से ही हमारा अगला शरीर तैयार होगा। या तो खोज के जाओ, तब तो मूल तक पहुँच जाओगे; या तो खोज में जाओ, तो अगला शरीर फिर मानव तन पाओगे कि आप उसे खोज सको, क्योंकि इसी शरीर में कर्ता का अधिकार है। भोग में जाओगे तो अगला शरीर भोग योनि में मिल जाएगा। तो सर्वप्रथम पूरी तरह ईमानदार बन जाओ, कि आप अपने आप से कह सको कि मेरा रोम-रोम ईमानदार हो गया।

प्रश्न: आपने बोला था कि हर विकार के पहले लालच आता है, फिर विकार बाद में आते हैं। तो लालच को कैसे गिराएं? (P16-0112)

जब लालच आए तो लालच वाला काम मत करो। लालच तो पैदा हो जाएगा, क्योंकि हमारी आदत है — जैसे ही अपने से ज्यादा सामने वाले के पास कुछ देखेंगे, लालच का जन्म हो जाएगा। पैदा तो हो गया, लेकिन उस पर काम ही मत करो, तो विकार नहीं आएंगे। लालच का जन्म हुआ तो मर जाएगा; लेकिन आपने काम कर दिया तो आपने उसे जिंदा कर दिया, बढ़ा दिया। प्रवृत्ति आपकी वही हो गई है, आदत के गुलाम हो गए हो। लोभ का जन्म होगा — काम नहीं करना है। मोह आएगा — मोह में जाना नहीं है। अहम आएगा — उस पे काम नहीं करना है। अगर नहीं करोगे तो प्रवृत्ति से मुक्त होकर निवृत्ति में आ जाओगे। लेकिन कब? जब आप करना बंद करोगे। इन सबके पीछे मैं ही हूँ — जो मेरा से मैं बनाया, हर जगह देखा जाए तो आप ही तो हो। प्रवृत्ति में झुंड है आपके साथ, उसमें भी आप हो लेकिन आप किसी और में हो; निवृत्ति में सिर्फ आप हो, और आप में परमानंद है। प्रवृत्ति में भीड़ है, और उस भीड़ में सुख-दुख है। तो मुझे अपने आदत वाले काम को छोड़ना है — जो मुझे गिरा रही है। और वह काम करना है जिससे मैं अपने आप को उठा सकूँ, छुड़ा सकूँ, प्रवृत्ति से मुक्त हो सकूँ। पहले तो ईमानदार बनो; ईमानदार व्यक्ति ही सात्विकता से जी सकता है। नहीं तो आप शब्दों की चोट मारोगे — तलवार का घाव शरीर पे काम करता है, शब्दों का घाव मन पर; चोट तो दोनों से लग रही है ना। ईमानदार व्यक्ति कभी किसी को चोट नहीं देता; बेईमान व्यक्ति सबको चोट देता है, अपने को भी।

प्रश्न: आप बोलते हो कि स्वभाव से जो निकलता है, पूर्णता से निकलता है, वह पहुंचता है। पर जैसे हम आए हैं, पहले तो अभाव में ही शुरुआत होती है — संसार में कुछ भी करते हैं तो ठोकरें लगती हैं, कुछ मिलता नहीं, तो अभाव में ही फिर हम इधर की ओर आते हैं? (P16-0113)

देखना यह है कि क्या आप झगड़े हो रहे थे इस वजह से इस तरफ आए, या पैसे-धन की कमी थी इसलिए आए? आप आए किस लिए? क्या आप संपन्न थे? संपन्नता अपनी-अपनी होती है — कोई झोपड़ी में ही संपन्न हो, कोई महल में भी ना खुश हो। तो आप पूरी तरह संपन्न थे, लेकिन देखा कि इसमें तो कुछ नहीं है, आपने वहां जीवन का अंत देख लिया, और लगा कि इसके आगे क्या है — और आप खोज में निकल गए, तो ऐसा व्यक्ति पहुंच जाता है।

प्रश्न: यह भी आपसे ही सीखा है कि हर कर्म का फल मुझे भोगना है। (P16-0114)

एकदम, भोगना ही है। आप स्वीकार नहीं करोगे तो भी भोगोगे, और स्वीकार करोगे तो भी भोगोगे। तो स्वीकार कर लेना ही ठीक है; भोगना तो आपको ही है, हर हाल में। देखो, कोई इलाज कराने जाता है — अगर स्वाभाविक करा लेता है तो ठीक है, नहीं तो बहुत लोग पकड़ के, बांध के करते हैं; करवाना तो पड़ेगा, नहीं तो सड़ जाओ। ऐसे ही कर्मों का परिणाम आपको भोगना ही पड़ेगा, पकड़ के भोगवाएंगे, भागोगे कहाँ? तो अपने कर्मों को भोगने के लिए तैयार हो जाओ। स्वीकार कर लो कि मैंने जितना भी किया है उसका परिणाम भोगूंगा, और अब से मैं ईमानदार रहूंगा — कोई भी स्थिति-परिस्थिति आ जाए, अब मैं बेईमानी नहीं करूंगा, चाहे मेरे साथ कोई रहे, चाहे ना रहे। जहाँ भी रहूंगा, मेरी ईमानदारी रहेगी, और इसका साक्षी स्वयं मैं हूँ। किसी के साथ रहने के लिए, या कोई मेरे साथ रहे इसके लिए, मैं झूठ का उपयोग नहीं करूंगा, बेईमानी नहीं करूंगा। कोई साथ रहता है तो ठीक, नहीं रहता है तो ठीक। जिंदा या मुर्दा, एक दिन तो साथ छोड़ना ही पड़ेगा। तो मैं ईमानदार बनके मिलूँ और ईमानदार बनके छूटूँ — सामने वाला क्या कर रहा है उससे मुझे मतलब नहीं। क्योंकि संयोग है तो वियोग है; संयोग में भी ईमानदारी और वियोग में भी ईमानदारी, तब आप मुक्त हो गए। लेकिन संयोग में बेईमानी और वियोग में बेईमानी, तो फिर आप आगे लोगों से मिलने की तैयारी कर रहे हो। पीछे का जो किया, अपना भोग लेंगे; किसी को बताने की भी जरूरत नहीं — लेकिन मैं कह सकूँ कि आज से मैं ईमानदार व्यक्ति हूँ, बात खत्म।

प्रश्न: पांचों विषयों — शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध — में आसक्ति है। इनसे आसक्ति कैसे जाती है? (P16-0115)

शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श — ये शरीर की भी जरूरत है, और शरीर के पीछे मैं रस भी ले रहा हूं। सर्वप्रथम दो तो बहुत जरूरी हैं — भोजन और सांस। अब सांस लेंगे तो उसमें गंध तो आएगी ही; अगर मैं कहूं गंध नहीं लूंगा तो मैं सांस नहीं ले सकता। तो मुझे ईमानदार बन के रहना है कि मैं इससे मुक्ति पाना चाहता हूं, लेकिन शरीर की जरूरत भी है। तो मैं जरूरत की पूर्ति करूंगा, लेकिन इसमें रस नहीं लेना है। तो धीरे-धीरे भोगते हुए भी आप मुक्त हो जाओगे। आप किस भाव से भोग रहे हो? भोगी भोग को बढ़ाने के लिए भोग करता है, योगी भोग से मुक्त होने के लिए भोग करता है। एक आगे और भोग के लिए तैयार हो जाता है, एक भोग से मुक्त हो जाता है — भोगी और योगी में बस यही फर्क है। सारा खेल भाव का है; भोग दोनों कर रहे हैं। ज्यादातर दिलचस्पी हमारी भोजन में होती है — खाओ, देखो कि मेरी जरूरत है और मैं ईमानदारी के पैसे से खा रहा हूं, तब तो ठीक है, तब मैं धीरे-धीरे उससे मुक्त हो जाऊंगा। भाव यही रखना है कि मैं खा रहा हूं लेकिन मुझे इस रसपान से, इस भोग से मुक्त होना है। योग्यता के अनुसार भोग करो; योग्यता से ज्यादा भोग करोगे तो फंस जाओगे। होटल में आपके पास जितना पैसा है, उससे ज्यादा भोजन कर लिया तो सेठ हाथ पकड़ लेगा कि पैसा दो, नहीं तो बदले में काम करो; और जितनी सामर्थ्य है उतने का मंगा के खाया तो बाइज्जत निकल जाओगे। तो अपनी योग्यता के अनुसार और ईमानदारी से भोग करो, तो आप फंसोगे नहीं; और भोग को इसलिए भोगना है कि भोग से मुक्त होना है। ईमानदारी, सत्कर्म और सत्संग को जीवन में अपना बना लो तो आप इस भवसागर से मुक्त हो जाओगे।

प्रश्न: गुरु जी, हमने एक पुस्तक पढ़ी थी, उसमें भगवान शिव कह रहे हैं कि जो आंखों से देखा जाए वह ब्रह्म नहीं है, आंख जिससे देखती है वह ब्रह्म है; जो कानों से सुना जाए वह ब्रह्म नहीं, कान भी जिससे सुनते हैं वह ब्रह्म है — इंद्रियां भी जिससे चलती हैं, वह ब्रह्म है। तो वह दिखाई क्यों नहीं देता? (P16-0116)

वह आपके पीछे है, और आप उसे आगे खोज रहे हो। आप पीछे मुड़ना ही नहीं चाहते, क्योंकि पीछे मुड़ते ही सामने का सब खत्म हो जाएगा। आगे ही बढ़-बढ़ के खोज रहे हैं — कहीं इधर गए, कहीं उधर गए। पीछे मुड़ते भी हो, तो बोल के मुड़ते हो कि मैं आ रहा हूं — तो कैसे मिलेगा? तुमने अपने आप को खूटे से बांध दिया ना, कि मैं वापस आ रहा हूं, मैं देख के आ रहा हूं। उसके लिए पूरी तरह कहां गए, कि अब मैं नहीं आऊंगा? पूरा तो देखने के लिए मुड़े नहीं; ऐसे मुड़े कि कहीं ये ना छूट जाए। तो ना ये मिला, ना वो। "जानत तुमहि तुमहि होइ जाई" — उसे जानोगे तो उसके जैसे ही हो जाओगे, परिवार आपको स्वीकार ही नहीं करेगा, तुम्हारा अस्तित्व मिट जाएगा। तो तुम जब अपना अस्तित्व मिटाने के लिए तैयार नहीं हो, तो वो तो मिटा नहीं सकता — तुम्हें पूरी स्वतंत्रता दी गई है। तुम कह रहे हो मैं आ रहा हूं, तो वो कैसे मिलेगा? क्योंकि उसके मिलते ही तुम खत्म हो जाओगे, इसलिए वो नहीं मिल रहा है। वो पीछे ही है, तुम्हारे इंतजार में खड़ा है, तो मुड़ तो जाओ। लेकिन तुमने बोला है मैं आ रहा हूं, और वो तुम्हारी बात को झूठा नहीं करना चाहता — वो तुम्हें खत्म कर दे तो तुम झूठे हो जाओगे, परिवार वाले बोलेंगे तुम तो बदल गए। इसलिए वो मिल नहीं रहा। तुम पूरी तरह एक बार पीछे मुड़ जाओ, बस खत्म। अब तुम आगे खोज रहे हो कि परिवार के साथ, पूरे संसार के साथ, संसार में उसे पा लूं। एक तरफ कह भी रहे हो कि शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे है वो, और फिर इसी में खोज भी रहे हो।

प्रश्न: अभी हम चर्चा कर रहे थे कि वह जस्ट आपके पीछे है — उस पर थोड़ा सा प्रकाश डालिए। वो कैसा है? (P16-0117)

वो आपके पीछे है, क्योंकि आप उससे हो — यह पक्का है, इसमें तो संशय नहीं है। तो मैं जिससे हूं, वो मेरे पीछे ही तो है। लेकिन वो कैसा है, कैसा नहीं है, जब तक पीछे नहीं मुड़ोगे तब तक नहीं बोल सकते। और पीछे मुड़ोगे तो बोलोगे किससे? क्योंकि तुम तो अब रहे नहीं, और तुम्हारी भाषा ये लोग अब नहीं समझने वाले — ये दूसरी भाषा के लोग हैं। इसलिए जो पहुंचते हैं, वो चाह के भी लोगों से उसकी चर्चा नहीं कर पाते। कैसे चर्चा करें? वो शब्द, दृश्य, रस, गंध, स्पर्श से परे है, तो इन इंद्रियों द्वारा उसकी चर्चा कैसे करें? एक तरफ कह रहे हो इससे परे है, एक तरफ इसी से चर्चा कर रहे हो — तो कैसे करोगे भाई?

**प्रश्न: आप जो बातें बता रहे हो, वह समझ में तो आता है कि सब सही है, सच है।
बस हम वहां तक पहुंच नहीं पा रहे हैं — भीड़ को नहीं हटा पा रहे। (P16-0118)**

आपको वहां नहीं जाना है। आप तो स्थिर हो। अगर आप देख पाओ, तो जब से आपका जन्म हुआ, आप कभी कहीं गए ही नहीं — कामनाएं लेकर गईं, जरूरत लेकर गईं। आप कहीं भी नहीं गए, आज तक आपका कहीं आना-जाना नहीं हुआ है। आप अभी भी स्थिर हो; जैसे ये कामनाएं खत्म होंगी, आप जहां थे वहीं हो — ना कहीं आए, ना कहीं गए, अभी भी उसके पास ही हो।

**प्रश्न: हमें जो घुमा रहा है, वो कामनाएं-इच्छाएं हैं या फिर हमारा हिसाब-किताब —
ये कैसे पता चले? कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि हिसाब-किताब है। (P16-0119)**

हिसाब-किताब बनाया कौन? आप ही ने बनाया ना। आप हमेशा तैयार कर रहे हो ना। बंद कर दो ना बनाना, बस एक दिन खत्म हो जाएगा। आपने ऐसी धारणा बना ली कि मुझे हिसाब-किताब पूरा करना है, जो भी है भुगत के निकलना है। पहले तो नया बनाना बंद करो। नया बनाना बंद करोगे तो पिछला तो नाश होगा ही होगा, क्योंकि परिवर्तन ही संसार का नियम है। नया बन नहीं रहा है, तो पिछला खत्म हो रहा है।

प्रश्न: अब जैसे हम फिर भी लौट के जा रहे हैं — ये हमारी इच्छा-कामना है या हिसाब-किताब है? इसको हम समता में कैसे लें? (P16-0120)

ये आप देखिए कि आप किस लिए जा रहे हो — इच्छा-कामना में जा रहे हो या कोई हिसाब-किताब है, उसका पता लगाना है। मैं गया किसलिए — उनके लिए कि अपने लिए? उसमें भी दोनों देखना है समता से। अपने लिए गया या उनके लिए — ये भाव का पता आपको ही है। कहीं बनावटी भाव तो नहीं था कि उनके लिए जा रहा हूँ और अंदर से अपने लिए जा रहा हूँ? ये आप ही पकड़ सकते हो, ये बहुत सूक्ष्म है। और अगर उनके लिए गया था तो क्यों गया था — वो भी पकड़ना होगा। बहुत सूक्ष्म यात्रा है ये; तभी आने-जाने वाला चक्कर बंद होगा। यहां जो आना-जाना दिख रहा है, ऐसे ही तो हम पता नहीं कितने शरीर धारण कर रहे हैं — बस शरीर बदल रहा है, कामना में वही सिस्टम पूरा चला हुआ है। इसको सूक्ष्मता से देखना है — क्या सच में उनके लिए जा रहा हूँ, या इसमें मेरी एक परसेंट भी इच्छा है? जीव की इच्छा भोग और भोजन। एक घटना सुनाता हूँ — चंदौली जिले में, बनारस के आगे, मैं गाड़ी लेकर आ रहा था, ट्रैफिक में गाड़ी रोक दी तो एक ट्रक वाले ने पीछे से ठोक दी, पूरी डिग्री टूट गई। हमारे साथी ने उतर के उसका कॉलर पकड़ लिया; मैंने तुरंत छुड़ाया, भीड़ को हटाया, कहा कोई बात नहीं, गाड़ी टूट गई तो बन जाएगी, किसी को कुछ हुआ नहीं। फिर उसे शांत होने का समय दिया और कहा — अंतरात्मा से सोच समझ के बोल, अगर एक परसेंट भी मेरी गलती है तो मैं गाड़ी उठा के चला जाऊंगा। उसने समय लेकर कहा कि बाबा, एक परसेंट भी आपकी गलती नहीं है। तो मैंने कहा, अब दो रास्ते हैं — या गाड़ी बनवा दे, या पैसे दे दे। किसी की सरलता को किसी की मजबूरी ना समझ — मैं सरल हूँ लेकिन मजबूर नहीं। वह पैसा लेकर आया, तो मैंने कहा, बचा तो कुत्तों को खिला दूंगा, कम पड़ा तो मैं लगा दूंगा। जाते-जाते वो बोला, इतने सालों से गाड़ी चला रहा हूँ, जिंदगी में पहली बार ऐसा आदमी मिला कि ठोकने के बाद भी बचा लिया। ये घटना इसलिए सुनाई कि बहुत सूक्ष्म यात्रा है, सोच समझ के जांचना। हमें ऐसा लगता है कि मैं लोगों के लिए जी रहा हूँ — लोगों के लिए जीना इतना आसान ना समझना। बातें करना बहुत आसान है कि मैं तो आपके लिए आया हूँ। यहां आप और तुम के लिए कोई नहीं आता, सब अपने मतलब में घूम रहे हैं। अगर मतलब खत्म हो जाए तो घूमना खत्म हो जाए — जिस दिन मतलब खत्म, उस दिन तुम खत्म।

प्रश्न: गुरुदेव, मानव जीवन की कीमत क्या है, उपयोगिता क्या है? मतलब जो शरीर हमें मिला है, इस शरीर की उपयोगिता क्या है? (P16-0121)

इस पृथ्वी पर जितने भी शरीर हैं — 84 लाख तो बोला गया है — उनमें यह शरीर ऐसा है कि इसमें कर्ता का अधिकार है; बाकी किसी शरीर में कर्ता का अधिकार नहीं, वहां भोग और भोजन है। योग और कोई नहीं करता। और आज तक इस पृथ्वी पर जितनी सुधारने की बात हुई है, बस मानव के लिए हुई है, किसी और जीव के लिए नहीं — मतलब सबसे बिगड़ा कौन है? मानव। इसकी तीन प्रवृत्तियां हैं — सात्विक, राजसी, तामसी। इस शरीर की उपयोगिता तो यह है कि इस साधन के द्वारा उस परम साध्य तक पहुंचना है। भोग-भोजन सिर्फ जरूरत के लिए करना था, उसमें लिप्त नहीं होना था; लिप्त हमें योग में होना था, योग के द्वारा अपने स्वयं तक पहुंचना था। लेकिन इसका उपयोग हमने भोग और भोजन के लिए कर लिया, और जब दुख आता है तब हम योग करते हैं। जब हमारे बेईमानी के कर्मों से जीवन अशांत होता है, जितनी व्यवस्थाएं थीं वही घुटन देने लगती हैं, तब हम योग की तरफ बढ़ते हैं। अगर आप इस शरीर में बस ईमानदारी से जीवन जियो, सत्कर्म करो, बेईमानी मत करो, तो आप स्वयं अपने आप तक, फिर उस परम सत्ता तक पहुंच जाओगे — क्योंकि यह शरीर मिला ही है उस परमात्मा से मिलने के लिए। आपको कुछ करना नहीं था, बस जीवन जीते हुए इंतजार करना था; लेकिन आप कुछ करने लगे, करने में बेईमानी करने लगे और अपने आप को पूरी तरह उलझा दिए। अब एक तरफ बेईमानी कर रहे हो और एक तरफ निकलने का प्रयास भी कर रहे हो — ऊर्जा बेईमानी में भी खर्च हो रही है और योग में भी, तो आप मानसिक रूप से ग्रसित हो रहे हो, समझ में नहीं आ रहा मैं क्या करूं, क्योंकि आप एक तरफ नहीं हो। बेईमानी से धन भी आए और मैं स्वयं तक पहुंच भी जाऊं — ऐसा हो नहीं सकता। अब फंसा दिए हो, तो निकलने के लिए ईमानदारी से सत्कर्म करना पड़ेगा। आखिरी में तो कुछ नहीं करना है — जब पूरी तरह आपके पास कुछ नहीं होगा, तब मोक्ष। जब तक कुछ है, उससे छुड़ाने के लिए कुछ करना है। मानव ही है जो पैदा करके खाता है; बाकी जीवों को भोजन-भोग प्रकृति देती है, वो प्राकृतिक जीते हैं — भूख लगेगी तो खाएंगे, भोग का समय आएगा तो भोग करेंगे। मानव पूरी तरह स्वतंत्र है — पेट भरने के बाद भी स्वाद के लिए खाता है, भोग चाहे जब करता है। हमें अपनी समझ से भोग-भोजन का सिर्फ सदुपयोग करना था और योग करना था; लेकिन हम स्वाद में पड़ गए, मान के चक्कर में वो कर बैठे जो नहीं करना चाहिए — इस शरीर का दुरुपयोग कर दिया। अभी भी आप चाहो तो इसका सदुपयोग कर सकते हो। सात्विक प्रवृत्ति में जियो, और यह तभी होगा जब आप छोटा-बड़ा बनने की इच्छा का त्याग कर दो — छोटा भी बनना चाहे, "देखो मैं सबसे छोटा बन के दिखाऊंगा", तो वह भी अहम भाव है। फिर देखो सात्विक प्रवृत्ति

में जीने लगोगे, उसमें अपने आप को पाओगे, और धीरे-धीरे अपने आप को छुड़ा लोगे — क्योंकि फंसाने की क्षमता आप में है तो छुड़ाने की भी क्षमता है। ईमानदारी में ताकत नहीं लगती, ताकत तो बेईमानी में लगती है। बेईमानी में बहुत सचेत रहना पड़ता है — 20 साल बाद भी याद रखना पड़ता है कि मैंने क्या बोला था; ईमानदारी में कोई याद रखने की जरूरत नहीं, जब मौका आएगा वही बोलोगे जो बोला था।

प्रश्न: बेईमानी छोड़ने में बड़ी परेशानी होती है। (P16-0122)

वही तो — क्योंकि उसमें ताकत लगी है ना, तो छोड़ने में भी ताकत लगेगी। कोई चीज आपने यहां से उठा के ताकत से वहां रखी, तो फिर वापस रखना चाहते हो तो ताकत तो चाहिए। इसलिए व्यक्ति अपने को बड़ा कमजोर पाता है। क्यों? इसलिए कि जब बेईमानी की तो अनेक लोगों ने साथ दिया, मलाई खा ली; अब आप निकलना चाहते हो तो कोई नहीं है, खुद ही सब करना है, पूरी ऊर्जा खुद लगानी पड़ रही है। पहले सबकी ऊर्जा मिल रही थी तो आसानी से बेईमानी कर ली, लेकिन जब छुड़ाना चाहते हो तो सारी ऊर्जा हट गई, आप अकेले बचे। अब निकाल कैसे पाओगे? अब एक ताकतवर इंसान ढूंढना पड़ेगा जो आपकी मदद करे — बिना मतलब के, जिसे कुछ नहीं चाहिए। ऐसा आदमी जल्दी नहीं मिलता; यहां सब अपने लाभ के चक्कर में घूम रहे हैं, जिसे कुछ चाहिए वो तो बेईमानी के लिए ही आएगा। इसलिए कठिन है। तो अब आपको एक ताकतवर आदमी की जरूरत है — उसी को कहते हैं गुरु। जिसे कुछ नहीं चाहिए, वो आपका कल्याण करने के लिए बैठा है कि आओ, हम तुम्हारी मदद करेंगे, तुम्हें छुड़ाएंगे; कोई बात नहीं, तुमसे देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में हो गया। वह आपकी कमियों को देखते हुए भी आपको अपनाता है — एक माता-पिता और एक गुरु, यही तो सृष्टि में हैं जो आपकी कमियां देखकर भी अपनाते हैं। कमी नहीं होती तो गुरु के पास आते क्यों? और वह उसे निकालने के लिए शब्दों के द्वारा आपको आंतरिक ऊर्जा देता है, आपको पता भी नहीं चलता। शब्द तो किताबों में भी पड़े हैं, वहां क्यों नहीं काम करते? क्योंकि उनमें शब्द हैं, ऊर्जा नहीं — चेक है, साइन नहीं है। जीवंत गुरु शब्द के साथ खुद का साइन दे रहा है कि यह मेरी खोज है, जाओ पास हो जाएगा, इसे कोई रोकेगा नहीं — बस इसका उपयोग कर लेना। बिना साइन का चेक लेके घूमो तो पास होगा क्या? इसलिए जीवंत गुरु चाहिए। किसी ने आपको लेटर दिया और वो अब पद पे नहीं है, तो उसका साइन काम नहीं करेगा; जो पद पे है, वो चाहे अंगूठा ही लगा दे, वो काम करेगा — पद की गरिमा है। तो गुरु एक स्थिति है। यह मत देखो कि उसके शब्द कैसे हैं; वो उस स्थिति पर पहुंच गया है तो हो सकता है तुम्हारे लिए अज्ञानी हो, तुम्हारी भाषा में ना बोल पाए, ठेठ भाषा में बोले — तुम्हें कई भाषाओं का ज्ञान हो, पूरी गीता कंठस्थ हो — लेकिन वो उस स्थिति में जी रहा है, वो तुम्हें निकलने का मार्ग बता देगा, उसको जज मत कीजिए। देखते नहीं, पढ़ा-लिखा आदमी करोड़ की गाड़ी से जाता है और जिसे गंवार समझते हो वही उसे रास्ता बताता है। तुम्हें लगता है इससे ज्यादा ज्ञान तो मेरे पास है, ये तो गीता का एक श्लोक नहीं बोल पाते — हां, नहीं मालूम, लेकिन इतना मालूम है कि निकलोगे कैसे; वो ग्रंथ को जी चुके हैं, आपको सिर्फ मालूम है, आप जिए नहीं। गीता कहती है झूठ बोलना पाप है — आपने पढ़ लिया, फिर भी बहुत बार बोला; यही फर्क है जीने में और याद करने में। पद तो जीने वाला पाएगा, रटने वाला थोड़ी पाएगा। इसलिए कहा गया है जीवंत गुरु

खोजो — देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में सब बदल जाता है, वह आपको तरीका बताएगा, और तरीका हमेशा नया होता है। पद पर जो बैठा है, उसे खोजो।

प्रश्न: गुरु जी, मैंने अनेक संत-महात्माओं को यह कहते सुना है कि परमात्मा मन और बुद्धि से परे की वस्तु है — मन और बुद्धि से उसे पकड़ा या समझा नहीं जा सकता। क्या यह सच है? (P16-0123)

देखिए, शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श — पांच इंद्रियां हैं: कान, आंख, नाक, मुंह और त्वचा। इन इंद्रियों द्वारा हम बाहर से पता लगाते हैं कि क्या बोला जा रहा है, क्या दृश्य है, क्या सूंघ रहे हैं, क्या स्वाद है, क्या स्पर्श है। अब कहा गया है कि शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे सत्य है, और इसके बाद ब्रह्म। तो हम परमात्मा के बारे में इंद्रियों द्वारा समझ ही नहीं सकते। हम तो यह समझ रहे हैं कि मैं निर्विकार कैसे हो जाऊं। अगर उसके बारे में मैं बात कर रहा हूं तो हमारे लिए वह कल्पना है — इन इंद्रियों द्वारा कुछ प्रत्यक्ष तो हो नहीं रहा। यात्रा आप अपने आप तक पहुंचने के लिए कर रहे हो। इस बुद्धि से उस तक नहीं पहुंचा जा सकता, अपने तक पहुंचा जा सकता है; और जो अपने तक पहुंच गया, वह उस तक भी पहुंच जाएगा। अपने आप को समझ लिया तो वहां बुद्धि खत्म हो गई, तब आंतरिक यात्रा होने लगी। बुद्धि तो बाहर जगत के लिए है। बाहर जगत में हम बुद्धि द्वारा ही फंसे थे, और समझ आई तो बुद्धि द्वारा ही बाहर से निकले — फंसाया भी इसी ने, निकाला भी इसी ने। क्यों कहा जाता है कि वह मन और बुद्धि से परे है? मतलब आप "मेरा" में रहकर, इंद्रियों द्वारा, उसे नहीं जान सकते। "मेरा" में इसलिए नहीं जान सकते कि "मेरा" में कुछ चाहिए, और "कुछ चाहिए" में वह नहीं है। पहले अपने तक पहुंचना होगा, डायरेक्ट तो नहीं पहुंच सकते। कहने का तात्पर्य यह है कि "मेरा" में उसे मत खोजो — "मेरा" में तो वह मिलेगा ही नहीं; कहने का मतलब है आप भटको मत। शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे आत्मा है, और आत्मा के बाद परमात्मा।

प्रश्न: तो आपके कहने का मतलब यह है कि मन और बुद्धि के द्वारा केवल स्वयं तक, आत्मा तक पहुंचा जा सकता है, और आत्मा से परमात्मा की यात्रा के लिए बुद्धि की आवश्यकता नहीं है? क्या वहां भी कोई आंतरिक समझ काम करती है? (P16-0124)

हां, उसमें बुद्धि नहीं — वह खत्म हो गया, बाहर जगत से आप मुक्त हो गए, सत्य तक आ गए। पहले अपने तक पहुंचा, और अपने तक पहुंचने के लिए उसने बुद्धि का, समझ का, ज्ञान का, शब्द-दृश्य-गंध-रस-स्पर्श का उपयोग किया। जब अपने तक पहुंच गया तो आंतरिक यात्रा होने लगती है। बुद्धि बाहर जगत के लिए है; पहले वह बाह्य जगत से मुक्त हुआ, फिर आंतरिक यात्रा। बाहर जगत में फंसा भी बुद्धि द्वारा, अपनी समझ द्वारा, और अब वह अपनी स्थिति में आ रहा है — जैसा था उसमें आ रहा है। मतलब "मेरा" में परमात्मा की यात्रा नहीं होती, "मैं" में हो सकती है, स्वयं में। इन इंद्रियों द्वारा उस तक नहीं पहुंचा जा सकता; इंद्रियों से मुक्त होना पड़ेगा, अपने आत्म में स्थिर होना पड़ेगा। पहले बाहरी जगत का ज्ञान काम कर रहा था — भटकने में भी और पहुंचने में भी। आत्म तक पहुंच गए तो बाहर जगत का ज्ञान खत्म हो गया, अब आत्म का ज्ञान काम कर रहा है, और आत्म से हम उस तक पहुंच रहे हैं। समझ वहां भी काम कर रही है, लेकिन वह आत्म की समझ है — पूरी बदल जाएगी। पहले हम बुद्धि से इसलिए काम करते थे कि हमें बाहरी जानकारी पर काम करना पड़ता था; अब आत्म को ज्ञान हो गया, बाहर से हम मुक्त हो गए, तो बाहरी जानकारी की कोई आवश्यकता नहीं। अब अंदर की जानकारी से अंदर की यात्रा हो रही है।

प्रश्न: गुरु जी, इस जवाब से मैं पूरा संतुष्ट नहीं हुआ। मुझे लगता है आप बुद्धि को नकार रहे हैं। यह मैं मान गया कि वह पांचों इंद्रियों से परे है, लेकिन यह समझने के लिए भी तो बुद्धि आवश्यक है ना? अगर आत्मा से परमात्मा की यात्रा करने वाला मंद बुद्धि होगा, तो उसकी यात्रा शुरू ही नहीं होगी। तो क्या इसमें बुद्धि का रोल ही नहीं है? (P16-0125)

देखिए, वह शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे है — कान, आंख, नाक, मुंह और त्वचा से परे। बुद्धि का तो हम उपयोग कर रहे हैं। बुद्धि को आप एक प्रकार की समझ बोल सकते हो; उसके अंदर पहले से जानकारीयां हैं, जितनी हमने एकत्रित की हैं। बुद्धि द्वारा हम भटके, बुद्धि द्वारा हम अपने आप में आते हैं; और अपने आप में आते हैं तो बाहर जगत से मुक्त हो जाते हैं, और सत्य से ब्रह्म की यात्रा होती है। वहां फिर बुद्धि का काम गया — बुद्धि तो बाहर के लिए है। जब आप आत्म में पहुंचते हो तो आत्म को ज्ञान हो जाता है, और उस ज्ञान द्वारा वहां पहुंचता है। मन-बुद्धि से परे वह इसलिए है क्योंकि मन तो "चाहिए" में काम करता है; नहीं चाहिए तो मन कहां है? बुद्धि भी "चाहिए" में ही काम करती है। अगर आपको कुछ नहीं चाहिए तो हाथ स्थिर पड़ा है; चाहिए तब ना हाथ उठाओगे। चाहिए से मुक्त हो गए तो बात खत्म — अब आत्मा परमात्मा की यात्रा कर रही है। जैसे एक महिला गर्भ धारण कर ले, तो उसे और कुछ नहीं करना पड़ता; बस खानपान पर ध्यान रखते हुए अपनी समझ से इंतजार करना है — अब मां बनने की आंतरिक यात्रा होगी, वहां कोई बुद्धि नहीं लगानी। ऐसा नहीं कि आंतरिक हो गए, अपने आप तक पहुंच गए, तो बुद्धि का उपयोग नहीं करोगे — करना होगा, भोजन के लिए, व्यवस्थाओं के लिए, अपना ज्ञान देने के लिए। बुद्धि खत्म कैसे होगी? चाहे उपयोग करे, चाहे ना करे, उसके ऊपर है। लेकिन इंद्रियों द्वारा उसको नहीं पाया जा सकता। उसमें कामनाएं हैं, और वह कामनाओं में नहीं है, इच्छाओं में नहीं है — न "मेरा" भाव में है। बुद्धि का उपयोग करके आप अपने आप को बाहरी जगत से मुक्त करा सकते हो, सत तक। उसके बाद आंतरिक यात्रा होगी ब्रह्म की, और बाहर जगत के लिए आप ज्ञान बांटोगे, लोगों को आत्मिक कल्याण का मार्ग बताओगे।

प्रश्न: तो फिर ज्ञान किसे होता है? और सही-गलत का निर्णय कौन करता है — क्या बुद्धि नहीं करती? (P16-0126)

बुद्धि को ज्ञान नहीं होता, आत्म को ज्ञान है। बुद्धि को कहां से ज्ञान होगा? यह हाथ — हाथ को थोड़ी ज्ञान है, आप इसे चला रहे हो, चाहे यहां ले जाओ चाहे वहां। हाथ शरीर का अंग है, बस बुद्धि भी शरीर का अंग है। आत्म में सबके पास वही ज्ञान है; जिसको जैसी बुद्धि मिली है, वैसा उपयोग कर रहा है। निर्णय भी बुद्धि नहीं कर रही, आप कर रहे हो — आप स्वयं; बुद्धि निमित्त है। आपको जैसी जानकारी है, उससे आप निर्णय कर रहे हो कि सही है या गलत। कभी-कभी आप गलत को सही कर देते हो और सही को गलत; फिर कहीं से सही जानकारी लेकर उसे सुधारते हो — बुद्धि तब भी वही थी, अब भी वही है। आप बुद्धि से अलग हो। ज्ञान का स्तर आप बढ़ा रहे हो, बुद्धि को निमित्त बनाकर; बुद्धि केवल समझने-समझाने के लिए निमित्त है, ज्ञान पहले से है। हाथ को कहां ले जाना है, आपके ऊपर है; आंख आप बंद कर लोगे तो आंख अपने आप नहीं खुलेगी। जैसे हाथ अलग है, पैर अलग है — सबका अलग-अलग काम है; मुंह से स्वाद मिलता है, नाक से सुगंध — वैसे ही इस शरीर के अंदर बुद्धि का भी अपना एक कार्य है। सबकी बुद्धि अलग-अलग होती है — जितना जिसने ज्ञान अर्जित किया, जितना समझा। बुद्धि का उपयोग आप कैसे करते हो, आपके ऊपर है; इसका उपयोग करके आप अपने आप को समझ भी सकते हो और भटका भी सकते हो। कोई दृश्य देखते हो तो आंख फैसला नहीं करती, आप करते हो — क्या देखना है, क्या नहीं, वह भी आप तय करते हो; आंख निमित्त है।

प्रश्न: मन और बुद्धि से परे कैसे जाएं? और गुरु जी, मन सीधे आ जाता है या मन से पहले विचार आता है? विचार से पहले क्या आता है? (P16-0127)

मन-बुद्धि से परे जाना है। "चाहिए" में मन काम करता है; नहीं चाहिए, बात खत्म। आप मोबाइल-कंप्यूटर इतने दिन से चला रहे हो — पहले पेज पर आ जाओ तो एरो गायब, जब आप कुछ खोलना चाहते हो, कुछ चाहिए, तब एरो आता है। वैसे ही मन "चाहिए" में काम करता है: जब कुछ चाहिए तो मन आ जाएगा खट से, और नहीं चाहिए तो मन गायब। सब एक साथ होते हैं — आपने क्लिक किया तो विचार आया तभी क्लिक किया। लीन होकर इसलिए नहीं बैठ पाते, खाली इसलिए नहीं बैठ पाते कि आपने कुछ करने की आदत बना ली है — कुछ ना कुछ चाहिए। "मेरा" में जीने की आदत पड़ गई है; आपको रस चाहिए, बेरस में आप जी नहीं पाते, बोर हो जाते हो। अपने आप को समय नहीं दिया, अपने आप को समझ नहीं पाए। यह सब — शरीर, इंद्रियां, बुद्धि — हमें उपयोग करने के लिए मिला है, और कर्म से मिला है; इसलिए सबका बुद्धि-स्तर अलग है — कोई एक बार पढ़ता है, याद हो जाता है; कोई बहुत बार रटता है, याद नहीं होता। शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे स्वयं सत्य है, फिर उसके बाद उसकी यात्रा। "मेरा" में बुद्धि से यात्रा करोगे तो भटकते रह जाओगे। इसलिए पहले इनमें जो आसक्ति है उससे अपने आप को छुड़ाओ, तब यात्रा परमात्मा की होगी।

प्रश्न: गुरु जी, जो यात्रा करता है, वह कौन होता है? (P16-0128)

यात्रा करने वाले तुम ही हो — चाहे बाहर जगत की यात्रा करो, चाहे आंतरिक। जो है, तुम ही हो; शरीर शरीर है, हम हैं, और बाकी भ्रम हो गया है। हमें रस में जीने की आदत पड़ गई है, इसलिए हम अकेले बैठ नहीं पाते — कुछ ना कुछ चाहिए, कुछ ना कुछ होना चाहिए।

प्रश्न: ज्ञान के बाद भी क्या वह बुद्धि का उपयोग करता है? और क्या वह आंतरिक यात्रा करता है? (P16-0129)

ज्ञान के बाद भी वह बुद्धि का उपयोग करता है — समाज को ज्ञान देने के लिए तो करना ही होगा। आंतरिक यात्रा ऐसे है: जैसे कोई मादा गर्भ धारण कर ले, तो अब उसे नर की जरूरत नहीं; अब वह मां बनने की आंतरिक यात्रा कर रही है, बस खानपान पर ध्यान दे रही है। मां बनने के लिए अब उसे कोई प्रयास नहीं करना; प्रयास गर्भ धारण तक करना था। वैसे ही अपने को निर्विकार कराने के लिए हमें प्रयास करना है; निर्विकार हो गए तो बात खत्म, अब इंतजार। उसमें वह कुछ कर भी नहीं सकता — मां काम करे या ना करे, मां बनने की यात्रा हो रही है। वैसे ही आत्म में कोई स्थिर हो गया तो बस आंतरिक यात्रा चल रही है, वह काम करे चाहे ना करे। उसमें दया और प्रेम रहता है — कि मैं कभी भटका था, समाज के लोगों ने भोजन और रहने की व्यवस्था में हमारी मदद की, जिन्हें हम जानते भी नहीं — तो उसमें दया, करुणा, प्रेम रहता है। वह समाज में आत्मिक कल्याण के लिए ज्ञान बांटता है; क्योंकि अब वह ज्ञान उसके काम का नहीं रहा, लेकिन लोगों के काम का है, तो बांटता रहता है, उसमें मेहनत करता रहता है, और उसकी आंतरिक यात्रा हो रही है।

प्रश्न: जो व्यक्ति दुष्कर्म करता है, क्या वह प्रकृति के गुण होते हैं या मनुष्य का चुनाव होता है? अगर चुनाव मनुष्य का नहीं, तो मनुष्य दुख क्यों भोगता है? (P16-0130)

चुनाव तो हमारा ही है, तभी तो हमें अच्छे-बुरे का पता है। अगर चुनाव प्रकृति का हो तो हम दुख क्यों भोगते? दुख तो हम भोग रहे हैं, पीड़ा हम झेल रहे हैं। हम बोलते हैं प्रकृति से जुड़े हैं — हम कहां जुड़े हैं? हम तो अपने आप से भी नहीं जुड़ पाए, हम तो वासनाओं से, कामनाओं से जुड़े हैं। प्रकृति से तो हमारा जीवन है, हम उससे अपनी जरूरत की पूर्ति कर रहे हैं। जिससे हम जुड़े होते हैं — अपने घर-परिवार से — उसे हम नुकसान पहुंचाते हैं क्या? अगर प्रकृति से जुड़े होते तो प्रकृति को नुकसान पहुंचाते क्या, प्रकृति में गंदगी करते क्या? प्रकृति का सदुपयोग करोगे तो मुक्ति से मोक्ष तक पहुंचोगे, दुरुपयोग करोगे तो यहीं भोगोगे। इसलिए सदुपयोग करो और आगे बढ़ो।

प्रश्न: क्या प्रकृति और परमात्मा एक ही हैं या अलग-अलग? (P16-0131)

एक ही हैं तो दो बोल क्यों रहे हो? सवाल में ही जवाब है — अगर एक ही है तो दो बोलने की जरूरत क्यों पड़ रही? किसी की परछाई और शरीर एक हैं कि दो? दो हैं, लेकिन आखिर में जाओगे तो एक ही हैं; फिर भी दो बोलना पड़ेगा। लेकिन यह ध्यान देना — शरीर से परछाई है, परछाई से शरीर नहीं। तो परमात्मा से जगत है, परमात्मा से आत्मा है, ऐसे ही परमात्मा से प्रकृति है।

प्रश्न: क्या परमात्मा के अंदर वासना पैदा हुई, तभी पृथ्वी का निर्माण हुआ? इसलिए तो हमारे अंदर भी वासना है? (P16-0132)

यह परमात्मा के पास चलकर उससे पूछेंगे — उसकी बात और कोई कैसे बताएगा? आपने कोई काम किया, तो किस भाव से किया, यह कोई और बता सकता है क्या? आप ही बता सकते हो। आपने यह माला पहनी है — मुझे क्या पता क्यों पहनी है: किसी ने गिफ्ट दी, आपने खरीदी, आस्था से पहनी, मजबूरी में या डर के नाते पहनी — वह आप जानो। वैसे ही परमात्मा की बात परमात्मा जाने; उससे बातचीत करेंगे, पहले उस तक पहुंचो। और उससे पहले तो अपने आप तक पहुंचो।

प्रश्न: योगी जी, मेरा प्रश्न है कि यह जीवन क्या है? केवल मनुष्य ही नहीं, हर कीट-पतंग, जीव-जंतु — एक चींटी को भी मारने की कोशिश करें तो वह भी अपने प्राण बचाती है। और कहते हैं कि मनुष्य योनि सबसे सर्वश्रेष्ठ है — यह तो मनुष्य ने खुद ही घोषित कर लिया, जबकि जितना मनुष्य गर्त में जा सकता है उतना शायद कोई और योनि नहीं जाती। बाकी योनियों को भोग योनि कहकर नीचा दिखा दिया।

प्रत्यक्ष ज्ञान इसके बारे में क्या कहता है? (P16-0133)

देखिए, पहली बात तो यह समझनी है कि मानव तन को सर्वश्रेष्ठ शरीर कहा गया है। "हम मानव हैं" — यही समझ लेना गलती है। हमें मानव तन मिला है; पृथ्वी पर जितने भी शरीर हैं, उनमें इस शरीर को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है, व्यक्तिगत आपको नहीं कहा गया। अब आपके कर्म के ऊपर है कि जैसा शरीर मिला है वैसा आपका कर्म है या नहीं। क्योंकि इसमें संभावना है — सात्विक, राजसी, तामसी। इस शरीर का मूल स्वभाव सात्विक है, लेकिन आपको स्वतंत्रता दी गई है कि आप राजसी भी अपना सकते हो, तामसी भी। अन्य शरीरों में ऐसी स्वतंत्रता नहीं है। ना किसी को जानवर समझो, ना किसी को मानव — ये तन हैं। इस तन को सर्वश्रेष्ठ इसलिए कहा गया क्योंकि यही एक तन ऐसा है जिसके द्वारा इसमें रहने वाला परोपकार भी कर सकता है और दुष्कर्म भी; बाकी शरीरों के द्वारा दुष्कर्म नहीं हो सकता, वे प्राकृतिक जीते हैं। मानव शरीर के अलावा किसी शरीर में रहने वाले को कभी दुष्ट या राक्षस नहीं कहा गया, लेकिन देवता या महात्मा भी नहीं कहा गया। जिसे मानव तन मिला, उसे राक्षस भी कहा गया, देवता भी, महात्मा भी, संत भी — कर्मों के अनुसार। जैसे धातुओं में स्वर्ण को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है उसके गुणों के कारण, सिर्फ पीला होने से नहीं — पीला तो पीतल भी होता है। वैसे ही मानव तन में जब आप सात्विक प्रवृत्ति में जीते हो, तब वह व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ है। और बाकी शरीर निकृष्ट नहीं हैं; उन्हें ना अच्छा बोला गया है ना बुरा, क्योंकि उन्हें कर्म का अधिकार नहीं है — वे पैदा करके नहीं खाते। मानव तन जिसे मिला है वही पैदा करके खाता है, और परोपकार की भावना, दुष्टता की भावना इसी में रहती है। अगर आप हजारों साल पीछे की बात करो, तो उस समय ये भी थे और मानव तन भी था — फिर मानव तन ही क्यों विकसित हुआ? क्योंकि इसमें संभावना थी, क्षमता थी — गिरने की भी, उठने की भी। बाकी शरीरों में कर्ता का अधिकार नहीं है, इसलिए उनकी समझ वहीं की वहीं है; जैसा शरीर का स्वभाव है उसी में जीते हैं, और कोई अलग आदत बनती है तो मानव उन्हें ट्रेड करता है। तो पहले यह समझिए कि आप मानव नहीं, जीवात्मा हो; आपको यह मानव तन आत्मिक कल्याण के लिए मिला है। यहां कोई छोटा-बड़ा नहीं है — लोहे की प्रतिमा बन जाती है तो सोना उसके चरणों में चढ़ता है; बात जरूरत की है। आपका कर्म कैसा है, यह बात है। आज तक पृथ्वी पर किसी और जीव के सुधरने के लिए कुछ

लिखा गया क्या? मानव में ही बिगड़ने और सुधारने की, भोग-भोजन और योग की दोनों संभावनाएं हैं; बाकी में योग की संभावना नहीं, लेकिन वे भी इसी शरीर की तरफ यात्रा कर रहे हैं। जैसे राज्य में कोई राजा है और कई लोग राजा बनने की यात्रा कर रहे हैं — राजा यह ना समझे कि मैं ही सर्वश्रेष्ठ हूँ; उन्हें भी मौका मिलेगा, और राजा भी गलत करे तो उसे दंड मिलता है। यह शरीर सर्वश्रेष्ठ है, लेकिन इसमें रहने वाला कैसा है, यह उसके ऊपर है — वह कर्म करके निकृष्ट भी हो सकता है और सर्वश्रेष्ठ तक भी जा सकता है। अन्य शरीर ना सर्वश्रेष्ठ तक जा सकते हैं ना निकृष्ट हो सकते हैं; उन्हें पाप-पुण्य नहीं लगता। हिरण घास खाती है, शेर मांस खाता है, लेकिन पाप-पुण्य उसे नहीं लगता — जिसको जो स्वभाव दिया, उसमें जीता है। मानव को सर्वाहारी कहा गया है, सब खाने की संभावना है; इसे समझ मिली है कि सात्विक भोजन करे, लेकिन जैसा खाएगा, जैसा करेगा, वैसा परिणाम इसे मिलेगा। मानव के लिए ही कहा जाता है कि यह पाप कर रहा है, पुण्य कर रहा है, परोपकार कर रहा है; किसी जानवर के लिए ये शब्द कभी निकले? उनके लिए कोई समाज, कानून, जेल नहीं है। तो समझिए, मानव हमारा एक चोला है; अपने आप को मानव ना समझें — जैसे ही आपने अपने आप को मानव समझा, आप भ्रमित हो जाओगे।

प्रश्न: तो फिर मानव बनता कब है? मानव का चोला तो मिल गया — अगर मैं इस चोले में रहकर अच्छे कर्म करूँ तो क्या होगा? मैं मानव कब कहलाऊँगी?

(P16-0134)

मानव तन तब तक रहेगा जब तक आपके जीवन में योग रहेगा — मतलब जब तक अपने आप को सुधारने की संभावना बनी रहेगी, तब तक आपको मानव तन ही मिलता रहेगा, जब तक आप परम साध्य तक ना पहुँच जाओ। लेकिन अगर आप अपने आप को सुधारने के बजाय बिगाड़ने लगे, भोग-भोजन में फँस गए, तो जीवन में योग रहा ही नहीं, फिर मानव तन से जाओगे। अच्छे कर्म करोगे तो यही शरीर मिलेगा। मानव होता ही नहीं, भाई — मानव शरीर का नाम है, मानव तन का नाम है। यह मानव तन है, यह कुत्ते का तन है, यह शेर का तन है। जैसे एक चपरासी को उसकी योग्यता अनुसार चपरासी का पद मिला था, कुछ समय बाद योग्यता बढ़ी तो मैनेजर बना दिया गया — तो क्या वह चपरासी था? शिक्षक की योग्यता देखकर स्कूल उसे प्रिंसिपल बना देता है — तो क्या वह शिक्षक था, क्या वह प्रिंसिपल था? जैसे एक ही कनेक्शन में पंखा लगा दो तो नाचेगा, बल्ब लगा दो तो उजाला देगा — ऊर्जा वही की वही है। जैसा कर्म है वैसा शरीर मिला; ना यहां कोई मानव है, ना कोई पशु — शरीर है।

प्रश्न: हर जीव अपने प्राण क्यों बचाना चाहता है? बहुत लोग 100 वर्ष के ऊपर चले जाते हैं; एक बूढ़ी अम्मा कह रही थीं कि अब तो सिर्फ मौत का इंतजार है, बस शरीर जल्दी छूटे और दर्द ना हो — फिर भी मौत का डर है। एक चींटी को भी मारूं तो वह भी प्राणों की रक्षा करती है। आखिर यह डर किस चीज का है? (P16-0135)

जब तक इच्छा-अपेक्षा है, तब तक डर है। जैसे आपके पास कोई वस्तु है और खो जाए तो तकलीफ होती है — लेकिन बात अच्छी-बुरी की नहीं, जरूरत की है: जब तक आप उसका उपयोग कर रही थीं। स्टोर में चीजें पड़ी रहती हैं कि क्या पता दोबारा काम आए; लेकिन अगर पता चल जाए कि यह वस्तु मेरे काम की ही नहीं रही, तो आप उसे हटा देते हो, और हटाते वक्त कोई दुख नहीं होता। जब तक उपयोग करना था, तब हट जाए तो पीड़ा होगी। तो कहने का मतलब है — जब तक हमारी इच्छा-अपेक्षा है और इंद्रियों द्वारा हम उसकी पूर्ति करने में सामर्थ्यवान हैं, तब तक मृत्यु का भय है। अब इच्छा-अपेक्षा तो रह गई लेकिन इंद्रियों द्वारा भोग नहीं कर पा रहा, इंद्रियां पूरी तरह कमजोर हो गई, यही शरीर परेशान कर रहा है — तब वह मरना चाहेगा, कि अगला शरीर मिल जाए; इसमें रहकर भी क्या करेगा। और इच्छा-अपेक्षा से मुक्त हो गए, तो भी मौत से आप मुक्त हो गए। जैसे आपने कोई साधन अपनाया — करोड़ों की गाड़ी है — लेकिन रास्ते में फाइनल हो गया कि अब यह आगे नहीं जाएगी, तो क्या उसमें बैठे रहोगे? छोड़कर चले जाओगे। साधन में तभी रहना चाहूंगा जब वह या तो भोग में काम आए या योग में; मेरे उपयोग के ऊपर है कि मैं किस में लगा हूं। जवान लोग जो आत्महत्या कर लेते हैं, उसके पीछे भी गहरी इच्छा होती है — कोई कामना पूरी नहीं हो पाई जो वे पूरी करना चाहते थे। पागल को कभी आत्महत्या करते नहीं देखोगे — कचरा बीनकर खाता रहता है, कहीं भी सोया रहता है, लेकिन आत्महत्या नहीं करता। तो इस पिंड से पीछा छुड़ाने का तरीका है इच्छा-अपेक्षा से मुक्त हो जाओ — यही तप है। कैसे भी अपने आप को इच्छा-अपेक्षा से, कामनाओं से मुक्त करा लो।

प्रश्न: अंत में थोड़ा यह बताइए कि इच्छा क्या है और अपेक्षा क्या है? (P16-0136)

इच्छा है योग्यता से ज्यादा पाने की चाह। जब आप योग्यता से ज्यादा पाना चाहते हो, वही इच्छा है; आपकी जरूरत, आपकी योग्यता जितना आपको मिल रहा है, उसे इच्छा नहीं कहते। पशु भी भोजन करते हैं, भोग करते हैं, लेकिन किसी पशु को कहा कि यह इच्छा-अपेक्षा में जीता है? आपकी सामर्थ्य नहीं है, आपको मालूम है मैं इस लायक नहीं हूँ, फिर भी किसी के द्वारा वह पाना चाहते हो — यह इच्छा हमें पीड़ा देती है। और अपेक्षा मतलब उम्मीद: मैंने किसी के लिए किया और उम्मीद बनाकर रख ली, उससे बात भी नहीं की, उसे पता भी नहीं; समय आने पर उसने नहीं किया तो लगा इसने मेरे साथ धोखा किया। क्या उसने वादा किया था? आपने अपेक्षा क्यों रखी? वह करेगा तो सुख, नहीं करेगा तो दुख — दोनों स्थिति में आप फंस जाओगे। अगर अपेक्षा ही बांधनी थी, तो करने से पहले बात कर लेते कि मैं आपके लिए यह कर रहा हूँ और बदले में मुझे यह चाहिए, तब करूंगा, नहीं तो नहीं। जैसे मान लीजिए आपको किसी पद की इच्छा है, योग्यता नहीं है, और आपने सेटिंग करके वह पद पा लिया — अब जितने लोगों से सेटिंग की है, वे जिंदगी भर आपको दबाएंगे। पहले उनके प्रति राग हुआ कि इन्होंने मुझे पद दिला दिया; अब वे आपका गलत तरीके से उपयोग करेंगे, क्योंकि पद दिलाने वाला तो गलत ही था। नकली चीज लास्ट तक नकली रहेगी; जिंदगी भर के लिए आप फंस गए। इसलिए जीवन में कभी भी योग्यता से ज्यादा मांग ना करना; और योग्यता से ज्यादा कोई दे रहा है तो पूछ लेना — भैया, क्यों दे रहे हो? इतनी कृपा क्यों कर रहे हो? हजारों लोग खड़े हैं, मुझे ही क्यों, मुझमें क्या खास देखा? जहां इच्छा नहीं होगी वहां अपेक्षा भी नहीं लगेगी। और यह तभी पूछ पाओगे जब आपकी योग्यता होगी; आपमें लालच होगा तो नहीं पूछ पाओगे। भटका हुआ इंसान मुझे भी भटका देगा, इसलिए साफ-साफ, सीधी, स्पष्ट बात करो। हमेशा अपनी योग्यता के अनुसार ही लेना चाहिए; योग्यता से ज्यादा जब भी मिले, मना कर दो। देने वाले को पता हो या ना हो, लेने वाले को अपनी योग्यता पक्का पता होती है। इसलिए अपनी पात्रता देखिए और उतना ही लीजिए जितना पच जाए — ज्यादा ले लोगे तो पचेगा भी नहीं।

प्रश्न: (एक फकीर बाबा, जो घर छोड़कर नर्मदा तट पर बैठे हैं:) उसने कहा था फकीर बनकर आ जा, तब मिलूंगा। मैं सब छोड़कर फकीर बन गया, फिर भी वह नहीं मिला। फकीर कैसे बनूं? (P16-0137)

फकीर बने या फकीर का मतलब समझे? फकीर का मतलब — जो अपनी लकीर को मिटा दे; जो जन्म और मरण से मुक्त हो जाए, वह फकीर है। पहले फकीर तो बनो। उसके लिए विकार छोड़ना पड़ेगा। कुछ करके संसार मिलता है; वह तो बिना कुछ किए मिलता है। बस कुछ करना बंद कर दो, अपने आप में हो जाओ — कुछ मत करो, प्रत्यक्ष हो जाएगा। अभी झोली तो छूट नहीं रही। सब छोड़ दो उसके लिए — बीड़ी, चिलम, खाना-पीना, चलना-उठना-बैठना, बातचीत, सब — तब बने फकीर। फकीर का मतलब ही है जिसने अपनी लकीर को मिटा दिया।

प्रश्न: बाबा, अभी तो गुरु भी नहीं मिला; हम तो मनमुखी आदमी हैं। गुरु के बिना क्या करें? (P16-0138)

गुरु शब्द है, बाबा। दत्तात्रेय ने 24 गुरु बनाए, लेकिन बनाया एक भी नहीं — देखकर ज्ञान लिया, माना, सम्मान दिया। गुरु ज्ञान का प्रतीक है; गुरु शब्द है, शरीर नहीं। शरीर को मत पकड़ो, शब्द को पकड़ो और आगे बढ़ जाओ। प्यास बुझाओ नल से, नल को मत पूजो — नल झूठा है, पानी सच्चा है। ज्ञान को लो और आगे बढ़ जाओ; इस पर चलोगे तो अपने आप मिलते रहेंगे। नल को पकड़कर बैठने की कोई जरूरत नहीं। व्यक्ति विशेष को कभी मत पकड़ना, फंस जाओगे।

प्रश्न: लोग कहते हैं कि अगर गुरु नहीं है, कंठी नहीं है, तो आप लाल-गेरुए कपड़े पहनकर नहीं निकल सकते। तो फिर क्या करूं? कपड़ों का क्या महत्व है?

(P16-0139)

जो पहनना है वह पहनो। लोग कहें कि पहनोगे तो पीट देंगे — तो पिटा जाना। इच्छाओं के लिए संसार में कितना पिटे हो? परमात्मा के लिए पहने हो तो उसके लिए पिट लेना; जूते तो संसार में खाकर निकले ही हो, क्या नया है। कपड़ा बस व्यवस्था जुटाने का एक माध्यम है — कि मुझे देखकर लोग व्यवस्था देंगे कि यह इस संप्रदाय के साधु हैं, इनकी व्यवस्था करो। इससे ज्यादा कुछ भी नहीं; कपड़े का मतलब इतना ही है कि सरलता से व्यवस्था मिल जाए। अब अपने को तो व्यवस्था छोड़नी है, व्यवस्था चाहिए नहीं। देखिए, आप यह वस्त्र पहने हो और मैं ये कपड़े पहने हूं — चलिए पानीपुरी की दुकान पर पानीपुरी खाते हैं: आपको अनेक बातें सुननी पड़ेंगी, मुझे कोई नहीं बोलेगा, क्योंकि बाबा पानीपुरी की दुकान पर बैठकर नहीं खा सकता, पिक्चर नहीं देख सकता, होटल में नहीं बैठ सकता — इस कपड़े के दायरे हैं। अब चलिए किसी गांव में: आपको लोग कहेंगे "आओ बाबा, चाय पियो, पानी पियो", व्यवस्था देंगे, सम्मान देंगे; मुझे कोई खड़ा भी नहीं करेगा, बोलेगा पागल है। यह है वस्त्र का महत्व। किस दायरे में रहना है, वह आपके ऊपर है।

प्रश्न: बीड़ी-चिलम पीने से ध्यान एक जगह एकत्रित हो जाता है; उसके इंतजार में यह एक सहारा है। बीड़ी छोड़नी जरूरी है क्या? (P16-0140)

चिलम पीने से मिलेगा? एकत्रित होता है तो एक क्यों पी रहे हो, पूरा दिन पीते रहो। ध्यान से कुछ नहीं होता, बाबा, वह चाहिए। जैसे एक मां अपने बच्चे को खोजती है, नशेड़ी जैसे नशे को खोजता है, भूखा जैसे भूख लगने पर भोजन को खोजता है, रोगी जैसे ठीक होने के लिए दवा खोजता है — वैसे खोजो। खोजी बनो, पागल हो जाओ। वह चाहिए कि सब चाहिए? सब है तो वह नहीं; वह है तो सब नहीं — बस खत्म। पहले वह मिले, उसके बाद जैसी व्यवस्था रहेगी, मिलने के बाद देखा जाएगा — वह बाद की बात है। अगर सच में दर्शन चाहिए तो उसके अलावा कोई काम मत करो; नहीं तो ऐसे ही खोजते रहोगे, व्यवस्थाओं का उपयोग करोगे, मजा लोगे और खोजते रह जाओगे। या तो दिन, या तो रात; या मर गए, या जिंदा हो — दो में से एक ही हो सकता है, दोनों नहीं; दो नाव पर चढ़ोगे तो फट के मरोगे, एक नाव पर सवार हो जाओ। पहले व्यर्थ की चीजें छोड़ दो — बीड़ी और गांजा; नशे से नाश होता है, मिलता कुछ नहीं। अल्पाहार लो: दो मोटी रोटी खाते हो तो एक कर दो। अब देखो, आपके लिए वह जरूरी है कि यह जरूरी है? जरूरी तो वही है — तब सब छोड़ दो।

प्रश्न: गुरु जी, आज हमें ऊर्जा के बारे में बताइए — एनर्जी, ऊर्जा कैसे काम करती है? (P16-0141)

देखिए, पहले हमें बाहरी जगत की ऊर्जा को समझना है, तब हम आंतरिक समझ पाएंगे — जैसे पढ़ना सीखना है तो सीखता अंदर वाला है, लेकिन पहले बाहर से सहायता लेनी पड़ती है। इस संसार की पहली ऊर्जा है अर्थ, जिसे पैसा कहते हैं, वैभव; उसी से हर वस्तु आसानी से खरीदी जाती है — सामान के बदले सामान मांगो तो कोई नहीं देगा, पैसे से लो तो कोई भी दे देगा। उसके बाद व्यक्ति की ताकत: सामने हमसे मजबूत आदमी हो तो उस पर हमारा गुस्सा काम नहीं करता, उससे गलती हो भी जाए तो हमारी ऊर्जा उस तरफ नहीं जाती; लेकिन हमसे कमजोर हो, अनजाने में गलती हो जाए, तो भी हम उस पर जल्दी हावी हो जाते हैं। फिर व्यक्ति की खूबसूरती — यह भी ऊर्जा है। इन ऊर्जाओं का प्रभाव है, जिसे आवरण कहते हैं। समाज में अमीर आदमी शराब पीता है तो उसे रईस कहते हैं — अपने दरवाजे बुलाकर पिलाते हैं, चखना देते हैं, गिलास भी धोते हैं, और लोगों को बताते हैं कि हमारे यहां ये आए थे; वही गरीब आदमी दरवाजे से दूर भी जा रहा हो तो परिवार वाले कहते हैं "देखो बेवड़ा जा रहा है"। शराब तो दोनों ने पी है, लेकिन एक के पास वैभव की ऊर्जा है, एक के पास कम। लेन-देन में, जीवन जीने में इन ऊर्जाओं की जरूरत पड़ती ही है — आप कितने भी महान, सज्जन आदमी हो, ट्रेन का टिकट पैसे से मिलेगा, सज्जनता से नहीं; कितने भी दुर्जन हो, पैसा दो और एसी में सोकर जाओ। इसलिए सामर्थ्यवान बनो — पैसा, शरीर और बाहरी ज्ञान से। इस ऊर्जा में लोग उलझे हुए हैं। ऊर्जा को नहीं छोड़ना — आप कितने भी त्यागी बन जाओ, इसके बगैर काम नहीं चलेगा, जीवन जीने के लिए वस्तुओं और संसाधनों की जरूरत है; छोड़ना है उसका प्रभाव — प्रभाव देना और प्रभाव लेना। जो ऊर्जा मिली है उसका सदुपयोग करो। सामने वाला कितना भी वैभव वाला हो, गलत काम कर रहा है तो उसकी गलती को सही मत बोलो; बेवड़ा बोलो तो दोनों को बोलो, या किसी को मत बोलो; एक को पिला रहे हो, एक को भगा रहे हो — ऐसा करोगे तो राग-द्वेष में फंस जाओगे। जब प्रभाव देने और लेने का भाव हटा दोगे, तब आपकी आंतरिक ऊर्जा जागेगी — लेकिन तब, जब आप ईमानदारी से जीवन जीते हुए सत्कर्म में लगे रहोगे। ऊर्जा को समझने के लिए भी ऊर्जा चाहिए — बुद्धि का स्तर भी ऊर्जा है: कोई बहुत मेहनत करता है उसे याद नहीं होता, कोई एक-दो बार पढ़ता है, याद हो जाता है। शरीर की ऊर्जा, बुद्धि की ऊर्जा — सब कर्म से मिली है; बाहर भी कर्म से मिलता है और अंदर भी कर्म से मिलेगा।

**प्रश्न: बाहर की ऊर्जा तो आपने बता दी, अब अंदर की ऊर्जा के बारे में बताइए।
अंदर की ऊर्जा एक ही होती है या इसके भी अलग-अलग स्तर हैं? (P16-0142)**

एक ही है — आत्मा से। लेकिन कर्म से वह जीवात्मा हो गया है, तो जैसा कर्म है वैसी उसे उपयोग करने की ऊर्जा मिली है। काम करके वह अपनी ऊर्जा को बढ़ा सकता है, अगर क्षमता है। मंदबुद्धि है, पागल है, तो कोई कुछ नहीं कर सकता — उसे ऐसा शरीर ही मिला है। अगर आपका समझने का स्तर है, आपको लग रहा है कि मैं समझ रहा हूँ, तो मेहनत करके और आगे जा सकते हो। समझने के लिए आपको बोला जा सकता है, समझने की क्षमता नहीं दी जा सकती। जैसे यहां हर जीव की भोजन करने की क्षमता अलग है — हाथी का भोजन चींटी नहीं कर सकती, उसमें दब जाएगी; और चींटी का भोजन हाथी के किसी काम का नहीं, लेकिन चींटी का पेट उससे भर जाता है। तो शरीर, ऊर्जा सबको अपने-अपने कर्म से मिली है; अब आप कितना जागृत कर लेते हो, आपके ऊपर है। सत्कर्म से, मेहनत से ऊर्जा बढ़ाई जाएगी — जिस दिशा में आपको जाना है, उस दिशा में काम करना पड़ेगा।

प्रश्न: गुरु जी, क्या इसके अंदर नेगेटिव ऊर्जा और पॉजिटिव ऊर्जा दो होती हैं, या एक ही होती है? ऊर्जा तो एक ही है, उसे गंदा कैसे किया जा सकता है? (P16-0143)

दोनों होती हैं। संसार में शुद्ध जल भी होता है, गटर का पानी भी होता है — जल तो जल ही था, लेकिन गंदा हो गया। गटर का पानी कोई दे तो पियोगे? जल तो वह भी है; क्यों नहीं पी रहे? क्योंकि गंदा हो गया है। आपका कर्म अगर बुरा है तो आपकी ऊर्जा नेगेटिव बनेगी, और आपका कर्म अगर सात्विक है तो आपकी ऊर्जा पॉजिटिव बनेगी; पीछे के जन्मों के कर्मों से भी चल रहा है।

प्रश्न: तो गुरु जी, एक आदमी में दोनों ऊर्जाएं भी हो सकती हैं? कौन सी जागृत होती है? (P16-0144)

देखिए, वह मानव तन में पैदा हुआ। अगर उसने मानव प्रवृत्ति — परोपकार की प्रवृत्ति — अपना ली, तब सात्विक जागृत होगी; और अगर उसने राजसी या तामसी अपना ली, तो अलग ऊर्जा जागृत होगी। राजसी अपनाए तो पॉजिटिव ऊर्जा आएगी, लेकिन वह सात्विक ऊर्जा से अलग होगी — राजसी ऊर्जा लोगों को दबाएगी, राज करेगी। परोपकार करोगे तो सात्विक ऊर्जा रहेगी; वह सबकी मदद करेगी — सामने कोई भी आ जाए, राक्षस आए या देवता, उसका काम है सेवा करना; उसे किसी से कुछ नहीं चाहिए, वह अपने आप को तारने में लगा रहता है। राजसी वाला अपने आप को बनाने में लगा रहता है — सबको खिलाता है, दान देता है, दान देकर पुण्य अर्जित करता है, और लोगों पर विजय प्राप्त करना चाहता है कि मैं कुछ हूं। तामसी वाला भी अपने आप को बनाने वाला है, उसकी नेगेटिव ऊर्जा जागती है — वह सबका शोषण करता है, सबको सताता है। तो राजसी अपनाई तो देवता वाली, तामसी अपनाई तो राक्षस वाली ऊर्जा, और मानव में रहा तो परोपकार में लगा रहेगा — सात्विक ऊर्जा उसे अपने आप से मिलाएगी।

प्रश्न: अगर किसी मानव के अंदर तामसिक और राजसिक ऊर्जा जन्म-जन्मांतर के कर्मों से पहले से इकट्ठी होकर आ रही है, तो क्या उसे खत्म किया जा सकता है?

(P16-0145)

हां, सात्विक में, परोपकार में लग जाए तो वह हट जाएगी — धीरे-धीरे खत्म होगी, धीरे-धीरे उसका नाश होगा। जैसे मान लीजिए आपको और इनको एक-एक लाख रुपये दिए गए; इन्होंने खर्च नहीं किया और आप लगातार फटाफट खर्च कर रहे हो, तो आपका खत्म हो जाएगा। वैसे ही जैसे-जैसे सत्कर्म करोगे, वैसे-वैसे ये साफ होंगे — पुण्य भी, पाप भी; पॉजिटिव भी, नेगेटिव भी, दोनों का नाश होगा। सात्विक ऊर्जा अलग है, वह परोपकार से होती है। दोनों जाएंगी तभी आप अपने आप से मिल पाओगे, तब अंदर से ऊर्जा जागृत होगी। अभी तो आप बाहर की ऊर्जा में फंसे हो — पॉजिटिव-नेगेटिव दो में से एक भी रहा तो आप यहीं फंसे हो। "अपने को तो पॉजिटिव एनर्जी चाहिए" — तो सात्विक ऊर्जा लो ना, परोपकार में, सेवा में लग जाओ। उसे सात्विक ऊर्जा बोलो, उसे पॉजिटिव नहीं बोल सकते; समझने के लिए बोल सकते हो। तीन प्रवृत्तियां होती हैं — मानव प्रवृत्ति, देव प्रवृत्ति, राक्षस प्रवृत्ति — तो तीन प्रकार की ऊर्जा हुई। दो ऊर्जा संसार की हैं — पॉजिटिव और नेगेटिव — वे संसार के लिए कार्य करती हैं; और एक ऊर्जा सात्विक है, अपनी है, अपने अंदर है — उसे अपने आत्म से जागृत करना है। अभी तक तो दो ऊर्जाओं में ही अटके पड़े हो; नेगेटिव छोड़कर पॉजिटिव में आ गए, पर उसे भी छोड़ना है। कोई भी एनर्जी पकड़े रहोगे तो बाहर ही हो।

प्रश्न: गुरु जी, ऊर्जा फील हो तो अच्छी बात है ना? उस एनर्जी को फील कौन कर रहा है? (P16-0146)

नहीं, गलत बात है — फील में पड़े रह गए ना फिर। आप हर वक्त एनर्जी को फील करना चाहते हो, तो अपने आप को कब फील करोगे? अपनी ऊर्जा को कब फील करोगे? जो बाहर की एनर्जी फील हो रही है, उसे जीव फील कर रहा है, जो इच्छा-अपेक्षा में जी रहा है; ऊर्जा फील करने की कैपेसिटी जीव की है। जैसे फ्रिज में रखने से पानी बर्फ हो गया, ठंडा हो गया — पीछे तो पानी ही है; वैसे जीव के पीछे आत्मा ही तो है।

प्रश्न: गुरु जी, एक जगह सत्संग में सुना था — भक्त ने पूछा कि ज्यादा से ज्यादा धन कैसे आकर्षित करूं, अमीर कैसे बनूं। महात्मा जी ने कहा कि दरिद्र की ऊर्जा अलग है और पैसे वाले की अलग; अमीर बनना है तो अमीर की संगत करो, उसकी मदद करो, तो वह ऊर्जा आपकी तरफ आकर्षित होगी; और गरीब की मदद करोगे तो दरिद्र की ऊर्जा आकर्षित होगी। क्या यह बात सही है? (P16-0147)

नहीं, यह बात सही नहीं है। हां, अगर आप गरीब होते हुए भी अमीर की मदद करोगे, तो जब अमीर मदद करेगा तो अपने तरीके से करेगा — कभी न कभी वह उसकी भरपाई करेगा, तो आपका भी स्तर ऊपर उठने लगेगा। लेकिन ऐसा नहीं कि गरीब की मदद नहीं करनी चाहिए — करनी ही चाहिए; उससे अनेक तरह के आशीर्वाद मिलते हैं, उससे भी बढ़ोतरी होती है। हमेशा उन जरूरतमंदों की सेवा करो जो उस लायक हैं। और अपने को तो आत्मिक कल्याण के लिए निकलना है — अपने को वैभव वाला नहीं बनना; अपने को तो आत्मिक कल्याण कैसे हो, उसके लिए काम करना है, और अपनी सात्विक ऊर्जा को कैसे जागृत करें, उसके लिए काम करना है।

प्रश्न: सात्विक ऊर्जा को जागृत करने के लिए क्या करें? (P16-0148)

पूरी तरह किसी की निंदा मत करो — कोई चाहे जैसा काम करे; जब परमात्मा ने स्वीकार किया तो आप कौन होते हो? जब कहते हो कि पत्ता भी परमात्मा के हिलाने से हिलता है, तो आप कौन होते हो किसी की निंदा करने वाले? अगर आप सहायता करके उसे बुराइयों से निकाल सकते हो तो मदद करो, या संविधान से या प्रकृति से ऐसा काम मिला है तब करो। बेमतलब दूर बैठकर किसी की निंदा कर रहे हो तो आप फंस रहे हो — वह अपना काम कर रहा है, बदलाव भी कुछ नहीं हो रहा, और आप वहां अपनी ऊर्जा खत्म कर रहे हो। और निर्विकार होने के लिए काम करो — कैसे मैं निर्विकार हो जाऊं: राग, द्वेष, मोह, आसक्ति, इच्छा, अपेक्षा, मेरा, कर्ता का भाव, "अपने तरीके से कुछ चाहिए" — इनका त्याग करो। और लोगों की सेवा करो, जितना हो सके — निर्धन की, असहाय की, जो जरूरतमंद हैं; जब भी मौका मिले, सेवा कर दो। यह सत्कर्म आपको आपसे मिलाता है। अपने आप को किसी भी तरीके से सत्कर्म में लगाओ। सात्विक ऊर्जा पूरी तरह तभी जागृत होगी जब आप पूरी तरह निर्विकार होंगे — विकारों से मुक्त होने के बाद अपने आप ही जागृत हो जाएगी; अपने को कुछ नहीं करना, बस ऊपर से हटाना है। जैसे कपड़ा पहनकर समाज में घूमे, गंदा हुआ, तो मैल धोना है — कपड़ा तो अंदर वैसा ही है; ऊपर का सांसारिक मैल धो दो, कपड़ा जिस रंग का होगा वह आ जाएगा। पूरी तरह जागृत हो गई तो आप पॉजिटिव से भी छूट गए, नेगेटिव से भी छूट गए, और सात्विक ऊर्जा के द्वारा वहां पहुंच जाओगे — फिर आत्मा का परमात्मा से मिलना।

प्रश्न: गुरु जी, मानव इसलिए तो नहीं बनना चाहते कि मानव में दुख और सुख दोनों आते हैं? राक्षस बनेगा तो उसे सुख ही सुख भोगने को मिलेगा? (P16-0149)

तीन गण भी होते हैं — मानव गण, देव गण, राक्षस गण। मानव तन में आदमी पैदा होता है, और कर्म करता है तो ज्यादातर या तो देव बनना चाहता है या राक्षस; मानव बनकर कम लोग जीना चाहते हैं। और मानव बनकर जियोगे तभी परमात्मा से मिलना होगा। देव भी बनना चाहे तो भटके, राक्षस बनना चाहे तो भी भटके — पाप-पुण्य की तिजोरी लेकर तराजू में इधर से उधर घूम रहे हो। मिलना तो तभी होगा जब पूरी तरह मानव बन जाओगे; इसलिए पहले अपने आप को पूरी तरह मानव तो बनाओ, पहले परोपकार में तो लगो। दुख-सुख राक्षस को भी आते हैं, देवता को भी आते हैं — क्यों नहीं आएंगे? ये तीनों दुख-सुख वाली योनियां होंगी, लेकिन मानव वाली नहीं; मानव वाली दुख वाली नहीं है, प्रसन्नता वाली है। संसार को दुखालय बताया गया है — लेकिन कौन सा संसार? जो आपने निर्माण किया वह संसार दुखालय है। परमात्मा का बनाया संसार दुखालय नहीं है; उसमें जो गया वह प्रसन्नता से भरा रहेगा। तुम्हारे संसार में दुख है — खुद के संसार में खुद ही दुखी है; उसके संसार में कोई दुख ही नहीं है।

प्रश्न: सात्विक ऊर्जा जागृत करनी है तो भोजन भी सात्विक करना होगा। गुरु जी, सात्विक भोजन कौन सा होता है? तामसिक भी कर लिया, राजसी भी कर लिया।

(P16-0150)

पहले तो भोजन की मात्रा घटा दो। जीवन जीने के लिए भोजन लो — जितनी शरीर को जरूरत है उतना। ज्यादा तेल-मसाला मत लो। खाना भी सात्विक तरीके से है, पात्र भी हल्का हो — सबसे शुद्ध पात्र मिट्टी का, फिर पत्तल; अब वह ज्यादा संभव नहीं, स्टील की प्लेटें चल गई, ठीक है। राजसी का मतलब — बहुत आइटम ले लिए, बहुत घी डालकर, काजू-किशमिश-बादाम-छुआरा-मुनक्का डालकर कई व्यंजन बना दिए, यह राजसी भोजन है। दाल-चावल-रोटी शुद्ध खा रहे हो तो यह सात्विक है। जितना खाना है उतना बनाओ, व्यर्थ फेंको मत — आज ज्यादा यही हो रहा है, खाना बनाकर फेंक दे रहे हैं। सात्विक बातें करो, टाइम-पास वाली बातें मत करो; जिन बातों से लाभ न हो वे मत करो, जिन बातों का सार हो वही करो। जीवन ऐसा जियो कि जीवन ही साधना बन जाए। देखो, आप इतने दिन से आए हो — कोई आकर मुझसे व्यवहारिकता की बातें करता है? ना नाम पूछता है, ना पता। ऐसा माहौल मैंने बनाया है; ऐसा माहौल आपको बनाना पड़ेगा कि आपके पास कोई बैठे तो साधना की बात करे, नहीं तो ना करे। भोजन सात्विक, बातें सात्विक, रहना सात्विक; ज्यादा सोना नहीं; हर समय चिंतन-मनन करना; कम से कम आठ घंटे अपने आप को जांचने में लगाना है। दृष्टा भाव से देखो, उतना ही बहुत है — देखना तो चालू करो; देखने से पहले सब निर्णय मत लो; एक-दो दिन, एक हफ्ता बैठकर देखो क्या घटित हो रहा है। धीरे-धीरे अपने आप को साधो — देर भी मत करो, जल्दबाजी भी मत करो; इतना तेज मत दौड़ो कि गिर जाओ, इतना धीरे मत चलो कि पहुंच ही ना पाओ। जज्बात में आकर फट से साधना में लग जाते हैं, फिर छोड़ देते हैं, फिर पकड़ते हैं — पहुंचने वाले होते हैं तो लास्ट में छोड़ देते हैं और फिर नए सिरे से शुरू करते हैं। लगे रहो, जब तक वह स्थिति ना आ जाए। इसमें बस मैं ही मैं हूँ — निर्णय करने वाला भी मैं, काम करने वाला भी मैं, पहुंचने वाला भी मैं, भटकने वाला भी मैं; सब कारण आप ही हो। नहीं तो जितने पहुंचे थे वे सबको पकड़-पकड़कर ले नहीं चले जाते? अगर आप किसी पर आश्रित हो, निर्भर हो गए हो, तो समझ लो कि आप भटक रहे हो; अपनी जवाबदारी लेकर काम करना — यह आपकी यात्रा है, आपको करनी पड़ेगी। कोई बताए तो भी धन्यवाद, ना बताए तो भी धन्यवाद — कम से कम आगे जाने का मौका तो दिया।

प्रश्न: गुरु जी, आपको 12 साल भटकने के बाद, इतने कष्ट झेलने के बाद आत्मज्ञान हुआ। तो क्या हर आदमी को उसी प्रकार आत्मज्ञान होगा? (P16-0151)

परमात्मा के मिलने की बात तो मुझे नहीं पता; मुझे इतना पता है कि आत्मज्ञान हुआ। ऐसा नहीं है कि सबको इतना भटकना पड़े; यह आप लोगों के कर्म का प्रारब्ध है। मैंने 12 साल एकांत ढूँढा; जिस गुरु-आश्रम से दीक्षा ली, वहां भी मुझे एकांत में रहने को नहीं मिला — उनकी आरती-पूजा में जाओ, आश्रम की सेवा करो, तभी रहने देंगे। 12 साल मैं एकांत नहीं मिला, इसलिए मैंने कहा कि हर साधक को एकांत दूंगा, और उसकी पूरी सुरक्षा की जवाबदारी मेरी। मैंने गाली से लेकर झापड़ तक, रात को भूखे रहने से लेकर बिना बिस्तर के रहने तक सब अहसास किया है — जिसने भूख का अहसास कराया, उसके कारण मैं किसी को भूखा नहीं सोने दूंगा; जिसने गाली दी, उसकी पीड़ा मुझे पता चल गई, तो मैं किसी को गाली नहीं दूंगा — इसलिए वे सब भी धन्यवाद के पात्र हैं। इसलिए यहां साधकों के लिए, जितनी उनके शरीर की जरूरत है और जितने में वे साधना कर सकें, सारी व्यवस्था शुरुआत से ही कर दी है।

प्रश्न: क्या आत्मज्ञान करवाने की जवाबदारी भी आपकी है? (P16-0152)

आत्मज्ञान तक कैसे पहुंच जाओ, उसके लिए मार्ग देना और मदद करना — यह कर सकता हूँ; पहुंचना आपको होगा। मेरा यह मार्ग ही प्रत्यक्ष है — सबसे बड़ी बात यह है कि चलने से पहले ही उसे पता है कि इस रास्ते से मैं पहुंचूंगा। अगर कोई भी मेरा सत्संग सुनता है, तो उसे खुद पता है कि मार्ग प्रत्यक्ष है, इस पर चलूंगा तो पक्का पहुंचूंगा; इसमें शंका करने वाली कोई बात नहीं, और निर्भरता यहां है ही नहीं। नहीं पहुंचेगा तो अपनी कमी से नहीं पहुंचेगा — इसका मतलब वह उस हिसाब से चल नहीं रहा। जिसने सुन लिया और समझने की क्षमता उसके अंदर है, वह खुद कहेगा कि इस पर चलने से पहुंचना ही पहुंचना है। मार्ग ही प्रत्यक्ष है, एकदम स्पष्ट है; अब चलना या ना चलना आपके ऊपर है।

प्रश्न: पांच तत्वों का हमारे जीवन में क्या महत्व है? (P16-0153)

यह शरीर हमें मिला है; पांच तत्वों से ब्रह्मांड का निर्माण हुआ है — अग्नि, पृथ्वी, वायु, जल, आकाश। अग्नि भी प्रत्यक्ष है, पृथ्वी भी, वायु का हमें एहसास होता है, जल भी प्रत्यक्ष है। आकाश तत्व बोलो तो ज्यादातर लोग ऊपर दिखाते हैं, लेकिन वह आसमान है। खाली स्पेस को आकाश तत्व कहते हैं — कहीं भी खाली जगह; हमारे शरीर में भी खाली जगह है। लोग कहते हैं धरती और आसमान के बीच को आकाश तत्व — लेकिन बीच तब होता जब आप दोनों किनारे देख पाते; एक किनारा तो देखा, दूसरा किनारा आज तक किसने देखा? अनुमान मत लगाओ; खाली जगह को, स्पेस को आकाश कहते हैं। अगर हमारे शरीर में स्पेस ना हो तो इसमें रह ही नहीं पाएंगे। अब जीवन में कुछ भी नया करना है तो खाली करना पड़ेगा — यहां पहले से एक सामान मौजूद है, तो उसे हटाकर ही दूसरा रख सकते हो। इसलिए कहा गया है कि अपने आप में होना चाहते हो तो निर्विकार हो जाओ, क्योंकि विकारों से भरे हो; पहले विकार हटेंगे तब ज्ञानमय हो जाओगे। अपने आप को खाली करो, क्योंकि आपने कुछ और भर लिया है। हर तत्व का महत्व है — पांच तत्वों के बिना हम इस शरीर में रह ही नहीं सकते, और सबकी अपनी-अपनी जगह जरूरत है, एक के बिना दूसरा अधूरा है। यह पंच महाभूत शरीर पांच तत्वों के संयोग से बना है; एक को हटा दोगे तो सब छिन्न-भिन्न हो जाएंगे। अग्नि शरीर में नहीं तो कुछ खाओगे, पचेगा नहीं; पानी का महत्व, वायु का महत्व; और चारों ओर खाली जगह ना हो, नाक पैक हो जाए, तो रह पाओगे? सांस ऑटोमेटिक चल रही है तो हमें पता नहीं चलता, दिक्कत आती है तब पता चलता है। जो प्रकृति से है वह सब ऑटोमेटिक मिलता है; प्रकृति के हर तत्व का उपयोग करो, सदुपयोग करो, दुरुपयोग मत करो। प्रकृति के लिए आपको कुछ नहीं करना है, बस उपयोग करो।

प्रश्न: पांच तत्वों का जुड़ाव कौन करता है? और पहले ऋषि-मुनियों के आशीर्वाद से भी संतानें होती थीं, जो योग से होती थीं — उसमें और भोग से होने वाली संतान में क्या अंतर है? (P16-0154)

पांच तत्वों का जुड़ाव चेतन करता है; बिना चेतन के पांच तत्व एक में नहीं होंगे। और जहां पांच तत्वों का जुड़ाव होगा, वह कामना से होगा — बिना कामना के नहीं हो सकता। यह शरीर भोग से आया है; इसीलिए आप आत्मा-परमात्मा की तरफ जाना चाहते हो तो शरीर भोग की तरफ जाता है। ऋषि-मुनियों ने भी किसी कारण से ही पैदा किया ना — कहीं ना कहीं कामना उठी। आप कामना को संबंध से मत जोड़ो; कामना का मतलब संबंध नहीं — भोजन करने की भी कामना है, पूजा कर रहे हो वह भी एक कामना है; आप कुछ करते हो तो उसके पीछे कुछ तो चाहिए। सृष्टि में जो जीव है वह भोग से है। आशीर्वाद से जो होते थे, वे संसार के काम के लिए पैदा करते थे — तभी करते थे जब जरूरत होती थी, कि अभी आवश्यकता है या नहीं, वंश सुरक्षित रखना है, वंश मिटे ना। आज हम-आप यहां बात कर रहे हैं, इसके पीछे भी कामना है — बस कामना इतनी है कि कामनाओं से मुक्त होने की कामना है; यह कामना आपसे आपको मिलाने की है। कामनाओं के बिना कुछ नहीं होता; कुछ हो रहा है तो उसके पीछे कुछ चाहिए — या अपने लिए, या समाज के लिए, या परिवार के लिए। कहने का तात्पर्य है कि कामनाओं से अपने आप को मुक्त कराओ — कौन सी कामना से? बेईमानी वाली, अपने तरीके वाली कामना से।

प्रश्न: पांच तत्वों से जो यह शरीर बना है, उठते-बैठते हम सारी चीजों का उपभोग कर रहे हैं — पानी पी रहे हैं, अग्नि से खाना बना रहे हैं। तो क्या इनका भी कोई ऋण हमारे ऊपर चढ़ रहा है? मां का दूध, गाय-भैंस का दूध — इनके बगैर हमारा जीवन नहीं चलता, तो इनका ऋण है? (P16-0155)

यह आपको कर्म से मिला है, इसका ऋण नहीं है; ऋण तब होगा जब आप इसका दुरुपयोग करो। जैसे ट्रेन या बस में टिकट लिया, पैसा दे दिया, लेकिन बैठकर सीट फाड़ोगे और पकड़े जाओगे तो उसका ऋण लग जाएगा। ऐसे ही नहीं मिला — जितनी भी व्यवस्थाएं हैं, धन हो, तन हो, ज्ञान हो, समझने की क्षमता हो, आपके कर्म से मिली हैं; इसलिए लोग अलग-अलग घर में, बैकग्राउंड में पैदा होते हैं — किसी को खूबसूरत शरीर मिलता है, किसी को नहीं, किसी का कोई अंग नहीं है। मां के दूध का भी ऋण नहीं है, क्योंकि उस मां ने भी किसी मां का दूध पिया है — यह प्रकृति की व्यवस्था है। तरीका गलत है तो ऋण हो जाता है। अब जब मां-बाप का समय आ जाए, जरूरत आए, तब आप सेवा करो।

प्रश्न: प्रकृति से हमें जो मिल रहा है, हम उसमें, उस व्यवस्था में जी रहे हैं — तो हमें क्या करना चाहिए? (P16-0156)

आप सदुपयोग करो। आप कुछ नहीं कर सकते, बस दुरुपयोग करना छोड़ दो। आपको लग रहा है कि इस पेड़ को मैं सींच रहा हूँ — जंगलों में, पहाड़ों में, पत्थरों में कई-कई साल से पेड़ खड़े हैं, गर्मी में उन्हें कौन पानी देता है? बस आप काटना बंद कर दो, आपको लगाने की जरूरत नहीं — प्रकृति उतना खुद पैदा करती है, उसे आपके सहयोग की जरूरत नहीं। प्रकृति पर कृपा मत करो, बस इतनी कृपा करो कि काटना बंद कर दो; प्रकृति सामर्थ्यवान है। आप पेड़ लगाते हो तो अपने लिए — उसकी छाया लेने के लिए, उपयोग करने के लिए; ठीक है, उपयोग करो, लेकिन यह मत कहो कि मैंने प्रकृति का सहयोग किया — आप प्रकृति का कभी सहयोग नहीं कर सकते, बस उपयोग कर सकते हो। यह शरीर परमात्मा से मिलने के लिए मिला है। आप बेईमानी करके फंस गए; अगर बेईमानी नहीं करते तो आपको किसी साधना की आवश्यकता नहीं थी — आखिर में शरीर छूटने के बाद परमात्मा के पास पहुंचते, क्योंकि ईमानदारी, सत्य तो अंदर है ही। कुछ करने की जरूरत नहीं थी, सिर्फ जीना था, और जीने में उससे मिलना हो जाता। तुमने जिया ही नहीं — तुम्हें कामनाओं ने, वासनाओं ने, सम्मान ने, बड़ा बनने ने, देव प्रवृत्ति ने, राक्षस प्रवृत्ति ने चलाया; तुम कब जिए? मान का चक्कर, स्वाद का चक्कर, अपने तरीके का चक्कर, कुछ बनने का चक्कर — इन चक्करों ने ऐसा डाला कि घनचक्कर हो गए हो; बस आगे बढ़ो, और कमाओ, और आगे बढ़ो — बाकी सब भूल गए।

प्रश्न: गुरु जी, ज्ञान प्राप्त होने के बाद इंसान को कैसा महसूस होता है? (P16-0157)

शादी तो आप लोगों ने की होगी — जिस दिन गौना आया, उस दिन का माहौल, वह खुशी; जिस दिन बाप बने, जिस दिन कोई मां बनी — क्या वह आप शब्दों में व्यक्त कर सकते हो? महसूस कर सकते हो, व्यक्त नहीं। यही कह सकते हो कि महसूस करना है तो विवाह कर ले और बाप बन जा, और कोई रास्ता नहीं। जब भौतिक जगत की बातें आप व्यक्त नहीं कर पा रहे हो — जिन्हें इंद्रियों द्वारा महसूस किया है — तो आत्मिक बात, जो शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श के बाद, इंद्रियों से परे जाकर हुई, उसे किन शब्दों में पिरोया जाए? लोगों ने पूछा तो मैंने कोशिश की, लेकिन उसे बताने के लिए शब्द बनते ही नहीं — शब्द उठाना चाहता हूँ तो मुस्कान, हंसी आ जाती है। उसे आनंद बोलो, जो भी नाम दो — उसे नाम भी नहीं दिया जा सकता। आत्मज्ञान शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे है। बस उससे ज्ञान निकल रहा है, उससे पता चल सकता है — जैसे कोई मां-बाप बने तो उनके बच्चे देख लो, लेकिन उस एहसास को वे नहीं बता सकते। उस स्थिति में पहुंचकर अनुभव करना पड़ेगा।

प्रश्न: आदमी के कर्म और पूजा-पाठ में क्या अंतर है? कर्म सर्वोपरि है या पूजा-पाठ?

(P16-0158)

कर्म। पूजा-पाठ कितना भी करो, कर्म ही नहीं करो तो कोई मतलब नहीं। और आखिर में कह भी दिया गया है — निष्काम सेवा; बिना इच्छा-अपेक्षा के किया गया कर्म पूजा है। सिर्फ अपनी कामनाओं के लिए नहीं — दूसरों के लिए, उन जरूरतमंदों के लिए। दूसरा तो हम मान बैठे हैं; यहां कोई दूसरा है ही नहीं, सब अपने हैं। अपनों के लिए, जरूरतमंदों के लिए निष्काम सेवा करना पूजा है।

प्रश्न: और जो प्राकृतिक है — ये पेड़-पौधे — उनका अपने जीवन में क्या महत्व है?

(P16-0159)

इनके बिना हम इस पिंड में रह ही नहीं पाएंगे; आज जो भी कर रहे हो, इनका सहयोग लेकर ही कर रहे हो। आज विज्ञान एक पत्ते से कुछ बना सकता है, लेकिन एक पत्ता पैदा करने की ताकत पृथ्वी पर किसी में है? एक काम बताओ जो बिना प्रकृति के कर दो — कुछ से कुछ बना रहे हो, लेकिन वह "कुछ" ले तो प्रकृति से रहे हो। आपका क्या है, बताओ? सांस लेनी है — ऑक्सीजन प्रकृति दे रही है; डिब्बे या बोटल में भरकर आ रही है तो वह भी प्रकृति से ली। बिजली किसी ने पैदा नहीं की, पहले से मौजूद थी, खोजने का तरीका मिला। हम कुछ नया नहीं कर रहे; सब प्रकृति में पहले से था, कोई नई खोज नहीं हुई — हमें अब समझ आई, बस इतना फर्क है। इसलिए प्रकृति का सदुपयोग करो, आगे बढ़ो। यह शरीर भी प्रकृति ले लेगी — जिस दिन उपयोग हो जाएगा, विलीन हो जाएगा; यह आपको उपयोग करने के लिए मिला है।

प्रश्न: (लाइव) गुरुदेव, क्या हम खुद ईश्वर तक पहुंच सकते हैं? क्या उसके लिए गुरु जी का होना आवश्यक है? (एक और प्रश्न: क्या बिना गुरु के भी आत्मज्ञान हो सकता है?) (P16-0160)

गुरु सत तक पहुंचने में काम करता है, उसके बाद खत्म — फिर आपको ही काम करना है। जैसे किसी को मां बनना है तो गर्भ धारण तक ही नर की जरूरत है, उसके बाद नहीं; तो गुरु की जरूरत आत्मज्ञान तक है, उसके बाद नहीं। गुरु बिना आत्मज्ञान कैसे होगा? गुरु बिना तो भटके ही नहीं हो। जरा समझिए — गुरु शब्द है, शरीर नहीं। बुरे शब्दों से अपने आप से भटके हो, अच्छे शब्दों से अपने में वापस आ जाओ — बस बात खत्म।

प्रश्न: (लाइव) गुरुदेव, नेगेटिविटी बार-बार कटवाने में बहुत खर्च हो जाता है। तंत्र करने वाले से कैसे बचा जाए? (P16-0161)

बस ईमानदारी से जीवन जीते हुए सत्कर्म करो — ना तंत्र, ना मंत्र, कुछ काम नहीं करेगा। जैसे मान लीजिए आप ईमानदारी से जीवन जियो तो प्रशासन क्या करेगा? पूरी प्रकृति आपकी मदद करेगी। अगर दो नंबर का काम करोगे तो हमेशा प्रशासन से डरोगे। बस ईमानदारी से जियो।

प्रश्न: (लाइव) मुझे जीने का मन नहीं करता, और मौत भी नहीं आती। क्या करूं? (P16-0162)

मौत और जीवन से परे भी कुछ है — वहां आप हो। अपने आप को समझने का प्रयास करो। और अगर ऐसी कोई बात है तो आप यहां अपनी कुटिया में आ सकते हो और अपने आप को समझने के लिए साधना करो।

प्रश्न: (लाइव) पांच तत्व क्या होते हैं? तत्व तो 24 बताए गए हैं। (P16-0163)

पांच तत्वों के बारे में हमने बता दिया। 24 ऐसे गिने गए हैं — जैसे पांच ज्ञानेंद्रियां, पांच कर्मेंद्रियां, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार — सबको मिलाकर 24 कर दिया है। हम भी गिना सकते हैं, लेकिन क्यों समय बर्बाद करोगे?

प्रश्न: (लाइव) ध्यान करते हैं तो माथे पर कुछ आता है; क्या आता है, मालूम नहीं पड़ता। (P16-0164)

ध्यान करिए; अगर कुछ आ रहा है तो उसे दृष्टा भाव होकर देखिए, उसमें लिप्त ना हों — यह गलती मत करिए।

प्रश्न: (लाइव) गुरु जी, जैसे रामकृष्ण परमहंस को महाकाली साक्षात दर्शन देती थीं, वैसे ही क्या मां ने आपको कभी साक्षात दर्शन दिए? (P16-0165)

मां है — इतना मेरे लिए बहुत है। मैंने ऐसा कभी प्रयास नहीं किया, क्योंकि मैं काम में लग गया। मैं खुद बोल सकता हूं कि अगर मैं प्रयास करूं तो मेरे लिए यह कोई बड़ी बात ना थी, ना है, ना रहेगी; लेकिन मैंने अपने आप को काम में लगा दिया। उनके होने का पक्का एहसास है, तो मुझे काम करना था, इसलिए उसके लिए समय नहीं दे पाया।

प्रश्न: (लाइव) गुरु जी, आपकी ऊर्जा, जब हम लाइव देखते हैं, तब भी हम तक आती है? ऑनलाइन वीडियो देखकर भी बहुत शांति मिलती है। (P16-0166)

ऊर्जा है। अगर आप स्वीकार करते हो तो आपको एहसास हो जाएगा। जैसे मोबाइल है — इन्होंने नेट चालू रखा है और आपने फ्लाइंग मोड कर दिया, तो आपके मोबाइल में नहीं आएगा; टावर वही है, ऊर्जा आपके आसपास है, लेकिन अस्वीकार करोगे तो नहीं मिल पाएगी। स्वीकार किया तो चाहे कहीं भी बैठे रहो, मिल रही है। लोग मुझसे प्रश्न करते हैं तो मुझे पता चल जाता है कि किस भाव से कर रहे हैं — कभी-कभी कोई ऐसा प्रश्न करता है कि आंख से आंसू आ जाते हैं, क्योंकि जैसे ही प्रश्न पढ़ते हैं, उस प्रश्न के साथ वाइब्रेशन आता है, मुझे महसूस होने लगता है, और हम बोलते हैं तो उन्हें महसूस होने लगता है — उन्होंने दिया, मैंने रिसीव किया, फिर छोड़ा। यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव है, चाहे आप दुनिया के किसी कोने में रहो। जैसे आपने किसी को सही नंबर दिया और उसने तुरंत डायल किया, तो दुनिया के किसी कोने में रहो, घंटी आप ही की बजेगी, आपके बगल वाले की नहीं — लेकिन नंबर सही होना चाहिए। अगर आपने समर्पण भाव से पूछा तो कनेक्ट हुआ, और फिर हमने जवाब दिया तो आपको पता चल जाएगा।

प्रश्न: (लाइव) काम-वासना के शमन के लिए क्या करना चाहिए? जब उपवास करते हैं, तभी काम-वासना ज्यादा क्यों होती है? (P16-0167)

क्योंकि आपकी ऊर्जा भोजन करने में तो खर्च हुई नहीं, तो ऊर्जा कहां लगे — वासना की तरफ चली जाती है। भोजन कर लेते हो तो ऊर्जा भोजन को पचाने में लग जाती है, और उपवास करते हो तो उसी तरफ ध्यान केंद्रित हो जाता है। और जीवन में सबसे ज्यादा भटकाव आंखों से है, और सबसे ज्यादा मदद भी आंखों से ही है।

प्रश्न: (लाइव) जब हम शरीर छोड़कर कहीं भी जाएं, ऐसी शुद्ध अवस्था कैसे प्राप्त कर सकते हैं? (P16-0168)

बस जाने से पहले अपने आप को पवित्र कर लो — ईमानदारी में आ जाओ। "कुछ नहीं चाहिए" में आ जाओ, उम्मीद छोड़ दो — यह आखिरी शब्द है। अब इसके आगे पूछ रहे हो कि क्या करें? पहले यह समझो — उम्मीद छोड़ दो, बात खत्म।

प्रश्न: (लाइव) नाम जप की महिमा के बारे में बताइए। (P16-0169)

जो नाम देते हैं, वे बताएंगे। मैं तो काम की महिमा बता रहा हूँ — जीवन में काम का क्या महत्व है, कैसे कर्म करके आगे बढ़ो; वही मैं बता सकता हूँ।

प्रश्न: (लाइव) गुरु जी, पंच तत्व ज्ञान में संगीत का क्या योगदान है? क्या संगीत से भी पहुंचा जा सकता है? (P16-0170)

संगीत उस तक पहुंचने का एक माध्यम है — लेकिन तब, जब संगीत का उपयोग उसके लिए कर रहे हो; तब एकदम पक्का पहुंचा जा सकता है। गंडकी की बात जानते हो? लोग जिसे दुनिया का सबसे बुरा काम मानते हैं — वेश्यावृत्ति — उसने उसको भी साधना बना लिया; और आप साधना करके भी साधना को साधना नहीं बना पा रहे हो। उसे वह काम जन्मजात मिला था, शौक से नहीं बनी थी; उसने भाव रखा कि 24 घंटे एक के साथ रहूंगी, और कोई भी हो, राजा हो या रंक, सबके साथ एक जैसा बर्ताव करूंगी, पति की तरह उसकी सेवा करूंगी — किसी को दुख नहीं देती थी, चोरी नहीं करती थी। विष्णु भगवान कोढ़ी का रूप लेकर उसकी परीक्षा लेने गए; वह सेवा में लग गई, 24 घंटे के अंदर उनके प्राण छूट गए, तो वह उस शरीर को लेकर श्मशान गई कि पति मर गया, अब रहकर क्या करूंगी — और जैसे ही आग लगाने गई, विष्णु भगवान प्रकट हुए और वर मांगने को कहा। उसने कहा — सब सुख लिया, बस पुत्र-सुख से वंचित रही; तो बोले, मेरे गोद में आ जाइए — वही शालिग्राम है, गंडकी नदी से निकलता है। इस संसार में जो भी चल रहा है, कुछ गलत नहीं — गलत भाव हो सकते हैं, हमारा सोचना गलत हो सकता है। गलत बनने और मिलने में फर्क है — मैं गड्ढे में गिर गया, और मैं खुद गड्ढे में गिरूंगा, दोनों में फर्क है; जो गिर गया और उठना चाहे, उसकी मदद करो। कर्म ही तो पूजा है — जब कर्म के प्रति ईमानदार रहोगे तो आप सध ही जाओगे, निर्विकार हो ही जाओगे। गलती यही हो रही है कि हम अपने कर्म के प्रति ही बेईमानी कर बैठते हैं और अलग से साधना करना चाहते हैं — दिन भर टीका लगाकर, घंटी बजाकर, माला घुमाकर, और कर्म में बेईमानी। कर्म में ईमानदार हो तो सारी चीज बस खत्म। कृष्ण भगवान ने अर्जुन से कभी अपनी पूजा करवाई? बोले — कर्म करो अर्जुन, कर्म के प्रति निष्ठा से कर्म करो; कर्म ही पूजा है।

प्रश्न: (लाइव) गुरु जी, लाइव आकर बात करने से आपके शरीर को कितनी तकलीफ होती है? (P16-0171)

ऐसा कुछ नहीं है। शरीर की तकलीफ है तो शरीर तक है। इसे हम सुख दें या दुख दें, जाना तो है — क्यों ना हम इसका उपयोग कर लें; हर स्थिति में तो जाएगा ही। इसे छोड़ने से पहले हम इसका सदुपयोग तो कर लें — वही हो रहा है।

प्रश्न: (लाइव) कुंडलिनी शक्ति जागृत करने के लिए चक्र-ध्यान कैसे करें? आत्मज्ञान की स्थिति कहां पर बनती है? कहा गया है कि आज्ञा चक्र के बाद जब सहस्रार खुलता है तब आत्मज्ञान होता है। (P16-0172)

बस सत्कर्म करो, सब जागृत होते चले जाएंगे। आत्मज्ञान की स्थिति "कुछ नहीं चाहिए" में बनती है। यह बात सही है कि सहस्रार खुलेगा तभी कुछ होगा — रास्ता यही है, बिना इसके खुले आत्मज्ञान नहीं होगा; जो ध्यान लगवाते हैं वे भी इसी तरफ इशारा करते हैं। लेकिन गलती यहां हो रही है कि यह देखने से नहीं खुलेगा। कोई शोरूम के सामने खड़ा करके कह दे कि गाड़ी को देखते रहो, तो देखने से गाड़ी खरीद लोगे? गाड़ी दिखा दी, अब जाओ पैसा कमाओ — कर्म करना पड़ेगा, पैसा कमाकर लाइए, तब गाड़ी या बंगला ले लीजिए। आप जब योग्य हो जाएंगे तो यह अपने आप खुल जाएगा। आपने इसे बंद किया है — आपके कर्म की वजह से बंद हुआ है, तो कर्म की वजह से ही खुलेगा। इस सिद्धांत को दुनिया नहीं समझ पा रही। कुछ बदलना है तो कुछ करना पड़ेगा, और वह भी सही तरीके से।

प्रश्न: (लाइव) भगवान के नाम जप में मन क्यों नहीं लगता? (P16-0173)

जहां लगता है, वहां क्यों लगता है — पहले वह देखो, और वहां से छुड़ाओ; फिर अपने आप लगने लगेगा।

प्रश्न: (लाइव) क्या अश्लील वीडियो देखने से या पारिवारिक संबंध बनाने से सिद्धि चली जाती है? (P16-0174)

सिद्धियां तो नरक का द्वार हैं; वैसे भी सिद्धियां नरक तक ही लेकर जाती हैं।

प्रश्न: योगी जी, संत तुलसीदास जी अपनी धर्मपत्नी रत्नावली में इतने आसक्त थे कि लाश को नाव और लटकते नाग को रस्सा समझ बैठे। रत्नावली ने कहा कि जितनी प्रीति इस हाड़-मांस से है, उतनी राम जी से होती तो बेड़ा पार हो जाता — और उनकी जिंदगी में यू-टर्न आ गया। ऐसी लोकोक्तियां तो हम भी सुनते हैं, पर हम पर असर नहीं होता, उल्टा कहते हैं "तू अपना देख"। तो यह बदलाव बोलने वाले के प्रभाव से हुआ या सुनने वाले की स्थिति से? बोलने वाले की बातें हम पर असर कब करती हैं? (P16-0175)

तुलसीदास जी अपनी पत्नी से आत्मीय प्रेम करते थे, सिर्फ शरीर का उनका लगाव नहीं था। शरीर एक निमित्त था, उनका आत्मिक लगाव था। जब किसी भी व्यक्ति से हमारा आत्मिक लगाव होता है तो उसके जीवन का एक-एक शब्द मेरे ऊपर काम करता है। और अगर हमने उसे सिर्फ भोग के लिए पकड़ा है तो वो कुछ भी बोले, कोई फर्क नहीं पड़ेगा, क्योंकि हम तो उसका शोषण कर रहे हैं — मुझे उसे अपने तरीके से भोगना है, उसके तरीके से नहीं। तुलसीदास शरीर के भोग में नहीं गए थे; अगर गए होते तो इतना सुनने के बाद भी भोग करते — बोल देते "तू ज्यादा ज्ञान मत दे"। जब आत्मिक लगाव होता है और वह व्यक्ति जरा सा भी हमें भोग का नाम देता है, तो वहां वैराग्य जग जाता है; वो सब कुछ त्याग करके चला जाता है, क्योंकि वो बताना चाहता है कि मैं इस हाड़-मांस के पुतले के लिए तेरे पास नहीं आया था, मैं तेरे लिए आया था — तो आज से मैं इस हाड़-मांस के पुतले का त्याग करता हूँ, हमेशा के लिए। जिसका लगाव सिर्फ भोग से है, शरीर से, वस्तुओं से — उसे कितनी भी गाली दो, वह समझौता कर लेगा, क्योंकि वह उस भोग के बिना नहीं रह सकता; उसे सामने वाले की पीड़ा, तड़प से लेना-देना नहीं। तुलसीदास को अगर शरीर से आसक्ति होती तो जाकर दूसरा विवाह कर लेते — भोग की कमी इस संसार में है ही नहीं — पिंड मिल जाता, लेकिन उनकी पत्नी उस पिंड में नहीं मिलती। इससे सिद्ध होता है कि उन्हें आत्मिक प्रेम था। और उनकी पत्नी ने भी ऐसा इसलिए बोला क्योंकि वह भी उन पर निर्भर नहीं थी। व्यंग्यात्मक शब्द, सच्चाई आदमी तभी बोल पाता है जब निर्भर नहीं रहेगा। गुलाम कभी सच नहीं बोल पाता।

प्रश्न: आजकल के प्रेमी-प्रेमिका भी यही बोलते हैं कि मुझे तेरे शरीर से कोई मतलब नहीं, मैं बस तुझसे प्यार करता हूँ — शब्द वही के वही हैं, भाव एकदम से पकड़ में नहीं आता। यूथ इससे बहुत जूझ रहा है, तो कैसे पहचानें? (P16-0176)

अगर कोई साथ रहता है तो पकड़ में आएगा, और नहीं आएगा तो फिर वो मंदबुद्धि होगा। और अगर आपको परीक्षा लेनी है — वो तो कह रहा है, लेकिन आपको संशय है — तो एक काम करो: आपको लग रहा है कि इसके द्वारा यह प्रेम को दर्शा रहा है, तो वो देना बंद कर दो। फिर देखो वो टिकता है क्या, उसका आपसे व्यवहार कैसा होता है। अगर आपको संशय है तो देना बंद करना पड़ेगा, तब आपको असलियत का पता चल जाएगा।

प्रश्न: इंसान कहीं ना कहीं खाली है, कमजोर है, अपनी इंद्रियों का गुलाम है — आंख, नाक, कान, इन सबका अपना रस है, और ये हमें डुबा लेती हैं। वह अपने आप उठ नहीं पाता, एक रास्ता छोड़कर दूसरे में गिर जाता है। तो क्या ये इंद्रियां ही हमें डुबा लेती हैं? (P16-0177)

ये नहीं डुबाती — इसी पे रुकना पड़ेगा। हम इसके द्वारा डूबते हैं। अगर यह डुबाती तो जितने महात्मा थे उन्हें उपलब्धि कैसे होती? उनके पास भी तो ये था। इसको निमित्त बना के हम डूबते हैं। सारी जिम्मेदारी खुद लेनी चाहिए।

प्रश्न: योगी जी, अगर तुलसीदास जी को आत्मीय लगाव था, तो क्या उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए था कि मैं जिस जीवात्मा से प्रेम करता हूँ उसका अब क्या होगा? वे साथ रहकर भी तो पक्का कर सकते थे कि तुझे भ्रम है, मैं तेरे शरीर के लिए नहीं आया। (P16-0178)

आप कह रहे हो ना कि वो साथ रहके पक्का नहीं कर सकते थे, छोड़ के — सबकी स्थिति अलग है। आप अपनी स्थिति से तुलसीदास की तुलना ना करो। उन्हें जैसे सिद्ध करना था, उन्होंने कर दिया।

प्रश्न: बहुत सी गृहस्थियों में पति कहता है, "मैं तो तुझसे आत्मीय प्रेम करता हूं, देख कितनी महंगी साड़ी ला दी", पर वह अपनी पूरी जिंदगी एक रस के चक्कर में निचोड़ देता है, और पत्नी इसी में लगी रहती है कि किसी तरह इसकी आदत छूटे। वो भी कहेगा मैं तुझसे आत्मीय प्रेम करता हूं। तो वहां मैं कैसे पता करूंगी कि यह आत्मीय प्रेम है या मेरा शोषण है? (P16-0179)

मैंने इसके पहले कहा कि अगर आपको लग रहा है तो वो देना बंद करो। वो देना बंद करोगे तो पता चल जाएगा, क्योंकि उसका व्यवहार पूरा बदल जाएगा। आपको लग रहा है कि यह मुझसे आत्मिक प्रेम नहीं करता, इस वस्तु के द्वारा — चाहे वो शरीर का नाम ले — इसे मिल रहा है, इसलिए मुझे इतना ये कर रहा है, तो वो देना बंद करके देखो। फिर उसके व्यवहार में परिवर्तन देखो।

प्रश्न: तो लास्ट में आपकी क्या सलाह रहेगी — आजकल बच्चे जिसे रिलेशनशिप का नाम देते हैं, पहले दोनों एक-दूसरे से कुछ ले रहे होते हैं, फिर एफआईआर के चक्कर में जिंदगियां बर्बाद हो जाती हैं — अपनी सेफ्टी कैसे करें? (P16-0180)

आप तभी ये प्रश्न खड़ा कर पाओगे जब आप भी ईमानदार रहेंगे, नहीं तो आपको हंसी आएगी अपने आप पे। अगर मुझे शक हो गया कि यह मुझसे नहीं करता, इसके द्वारा मुझे बताता है, ये करता इससे है — तो वो देना बंद करो। जीने के लिए मुझे क्या चाहिए? भोजन, कपड़ा, मकान। उसके लिए मुझे खुद आत्मनिर्भर बन जाना चाहिए। और जब आत्मनिर्भर रहोगे तभी आप ऐसा कर भी सकते हो। अगर आप उस पर पूरी तरह निर्भर हो तो आपको नाचना ही पड़ेगा। आत्मनिर्भर व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है, सामर्थ्यवान व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है — जिसके द्वारा वो आ रहा था वो देना बंद करेगा, क्योंकि उसे पता है वो आना भी बंद कर सकता है। अगर वह उस पर निर्भर है तब तो उसका शोषण सहता रहेगा, जूते खाता रहेगा।

प्रश्न: तो क्या इसका मतलब यह समझें कि अगर कोई कह रहा है कि यह मेरा शोषण कर रहा है, तो वह भी शोषण करवा रहा है? (P16-0181)

वो करवा रहा है, लेकिन वो भी कर रहा है — वो बता नहीं रहा है। मैंने एक उदाहरण दिया, इस उदाहरण को पकड़ लो — मां-बच्चे का, और इंसान में नहीं जानवर में भी देख लो। बचपन से देखा है कि गाय बछड़े को दूध पिला रही है; अगर दूध नहीं है तो बछड़ा छोड़ देता है, और अगर स्तन कटा है, दूध है, तो गाय अपने ही बछड़े को लात मार देती है। कहने का मतलब, लेन-देन अगर हो रहा है तो दोनों को कुछ मिला; अगर एक को नहीं मिलेगा तो वह रहने ही नहीं देगा। जीव अगर दे रहा है तो ले रहा है। और यहां यह जरूर ध्यान रखना है कि अगर उसने मुझे लात मारी है — मां कोई भी हो सकती है, प्रेमी, प्रेमिका, समूह — तो ना मुझे उसका वेट करना है और ना मुझे दूसरे पे शिफ्ट होना है, क्योंकि दूसरे पे शिफ्ट होगा तो वही परिणाम आना है, वही लात मारेगा। मुझे खुद आत्मनिर्भर बनना है, सामर्थ्यवान बनना है। इसलिए मैं कहता हूं कि गिड़गिड़ाना बंद करो, सामर्थ्यवान बनो, ताकतवर बनो। लेकिन वो ताकत ईमानदारी से होनी चाहिए — ताकतवर आदमी समाज में बेईमानी से भी बन जाता है।

प्रश्न: मैं आंखों के आकर्षण के कारण किसी तक पहुंची, फिर उपराम आ गया — रूप ही तो चेंज है, और इसमें मैंने कितना फंसाव कर लिया। अब लगता है यह आंख ही मुझे भ्रमित कर रही है। तो क्या अब मेरा दायित्व यह होना चाहिए...? (P16-0182)

आंख भ्रमित नहीं कर रही है। आंख के पीछे तो आप ही ले रही थीं ना। आंख तो बीच में है। ये शब्दों को बहुत खोलना पड़ेगा — ये शब्द ही आपको पहुंचाएंगे और शब्द ही आपको भटकाएंगे, और जैसा आप शब्दों को लेकर बोलोगे वही आप हो जाओगे, प्रिंट हो जाएगा। आंख बीच में है, आंख के पीछे आप हो, आंख के आगे दृश्य है। आंख तो निमित्त है, वो एक साधन है। इसके पीछे वाला सामने दृश्य का रस ले रहा है; उसे जानकारी है — जानकारी नहीं होगी तो रस नहीं ले पाएगा। आंख के पीछे वाला, और वैसा रूप सामने है जैसी उसकी चाहत थी, तब वो लिप्त हो जाता है। उसके पास उसे भोगने की समझ हो — भोगने की समझ नहीं है तो नहीं भोग सकता। तो आंख निमित्त है, ये ध्यान रखिए।

प्रश्न: आपका प्रत्यक्ष ज्ञान क्या कहता है — अभी मेरे सारे उपकरण हेल्दी हैं, पर जब तक मैं अतृप्त हूं, आसक्त हूं, प्यासा हूं, तब तक यह बात समझ में भी नहीं आएगी; और जब तक रस नहीं निचोड़ा, कोई ताकत मुझे रस लेने से रोक नहीं पाएगी। मेरी इतनी जिंदगी बर्बाद हो गई, ऊर्जा खत्म हो गई — तो अब मैं यह बात कैसे समझूं? (P16-0183)

अब अपने आप के अंदर प्रश्न खड़ा करना है कि यार इतने दिनों से तो भोग रहा हूं, क्या मिला? यहां लाके अपने आप को खड़ा करना पड़ेगा। अगला-पिछला जन्म छोड़ दो — मैं जब से समझने लायक हुआ हूं, इसका रसपान कर रहा हूं, मुझे क्या मिला? क्षणिक सुख, फिर मैं वहीं खड़ा हो जाता हूं; और देखा जाए तो मैं पहले से ज्यादा दुखी हो गया। जितना मैं रस भोगता गया, उतना कलह ही मेरी जिंदगी में आता है, क्योंकि जिसका मैं रस ले रहा हूं उसकी जिम्मेदारी भी मेरे ऊपर आ रही है, और उसे पूरा करने में मुझे बेईमानी करनी पड़ रही है। जब जीव भोग से मुक्त होना चाहेगा तो अपने आप को देख पाएगा कि मैं इस वक्त कहां खड़ा हूं, और 20 साल पहले कहां था, जब ये लोग मेरी जिंदगी में नहीं थे। जैसे-जैसे रस भोगा, वैसे-वैसे फंसता गया; जितने लोगों का रस भोगा, उतनों की जिम्मेदारी मेरे ऊपर आ गई, और आज यही लोग मेरे कलह का कारण बन गए। इन्हीं की वजह से मुझे बेईमानियां करनी पड़ीं, चापलूसी करनी पड़ी; इस भीड़ ने मेरे स्तर को गिरा दिया। अरे, ये भीड़ इसलिए आई क्योंकि मैंने रस का चटकारा लिया — मैंने लिया भी, दिया भी; नहीं दिया होता तो भीड़ नहीं खड़ी होती, सामने वाला आप पे इल्जाम ठोक देता। तो अब भोग छोड़ने का, त्याग का भाव लाना पड़ेगा कि नहीं यार, अब बस। अगर मैं इस रस को लूंगा भी तो छोड़ने के भाव से, क्योंकि रस का मैं आदी हो गया हूं, तुरंत नहीं छूट जाएगा। अगर व्यक्ति की स्थिति है कि एक झटके में तोड़ दे तो बात अलग है — जैसी वाल्मीकि जी की थी, एक झटके में छोड़ दिया। अब आपकी स्थिति पे, मनोदशा पे निर्भर करता है — या तो तुरंत छोड़कर निकल जाओ, या धीरे-धीरे समझ-समझकर छोड़िए, क्योंकि कुछ व्यक्तियों की जिम्मेदारी एकदम नहीं होती, कुछ की होती है। तो देखना है कि जीव किस स्थिति में खड़ा है, उस स्थिति में सोच-समझ के फैसला ले और अपना आत्मिक कल्याण करे। भोग से मुक्ति का भाव लाना पड़ेगा, तब कुछ हो सकता है।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, मैं बहुत कंप्यूज हूं कि अपना जीवन कैसे जिऊं — साधारण जिऊं, सब कुछ छोड़-छाड़ के साधु बन जाऊं, या एकदम बुलंद जीवन जिऊं, नाम कमाऊं, पूरी दुनिया को सही मार्ग से, ज्ञान से जोड़ पाऊं? (P16-0184)

तो भाई, जैसे आपको जीना है जी लो। बाद में ये ना कहना कि मैं जिया नहीं। क्योंकि जी के तो हमने देख लिया — मुझे तो निकलना है।

प्रश्न: (लाइव) आप भी जाने के लिए रास्ता ढूंढ रहे हैं और हम भी, लेकिन हमको बताने के लिए आप हो। अगर आप चले जाओगे तो हम कहां बात करेंगे? हमने तो अभी पहला ही कदम रखा है। (P16-0185)

अब हम रास्ता नहीं ढूंढ रहे हैं, अब निकलना है — तैयार हैं। बस इतना इंतजार है कि शरीर से कब निकलेंगे। अब रास्ता नहीं ढूंढ रहे, अब निकलना है।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, आप रो रहे हैं तो हम साधारण जीव क्या करेंगे? (P16-0186)

आप साधारण नहीं हैं। साधारण समझना ही साधारण है। एक ही ब्रह्म से सब है — कोई साधारण नहीं है।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, फिर सफल जिंदगी क्यों जिएं हम लोग? अगर सब लोग यही सोचने लगे तो सबका भला कैसे होगा? प्लीज यह बताइए कि सफल जिंदगी कैसे जिएं। (P16-0187)

मुझे निकलना है। मुझे किसी का भला सोचना है ना बुरा सोचना है, मुझे तो बस जाना है। ... सफल जिंदगी कैसे जिएं? अपने आप को समझकर।

प्रश्न: (लाइव) क्या कबूतरों को बाजरा डालने से दरिद्रता आती है? कौन सा दाना डालें कबूतरों को? (P16-0188)

दरिद्रता आए, चाहे पुण्य हो, चाहे पाप लगे — सत्कर्म करते रहो, किसी भूखे को भोजन कराते रहो।

प्रश्न: (लाइव) राधा व मीरा में क्या भेद है? (P16-0189)

भेद समझना ही भेद है।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, अपने आप को कैसे जानें? (P16-0190)

बस राग-द्वेष से अपने आप को छुड़ा लो। देखिए, एक प्रश्न समाज में बहुत विख्यात हो गया है इस समय — मैं कौन हूँ? जब आप पूछते हो ना, तो दूसरे को ही नहीं पता है तुम कौन हो, लेकिन कहता है मैं बताऊंगा। अरे, आपको पता है मैं कौन हूँ। अगर आपको ठीक लग रहा है तो ठीक है, नहीं तो उससे हटने के लिए प्रयास करिए। सबको पता है मैं कौन हूँ, आप इसे समझने का प्रयास करिए — पूछने जाते हो तो दूसरा कोई फायदा उठा लेता है। आपको अगर लग रहा है "मैं कौन हूँ", तो तुमसे "मैं" पैदा हुआ है; उसको गिराने के लिए — तुम जो पांचों इंद्रियों द्वारा शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श का रसपान कर रहे हो, वह रसपान छोड़ दो। तुमसे "तुम" छूट जाओगे और बचेगा परम सत्य। बहुत सरल है। इसलिए आप सीधा पूछो ना — मेरा जीवन अशांत है, मैं पीड़ा में हूँ, इससे कैसे छुटकारा पाऊँ, इसके लिए मुझे मार्ग बताओ। पूछते हो मैं कौन हूँ, तो लोग बोल देते हैं तुम आत्मा हो, भगवान हो, पवित्र आत्मा हो — और तुम जीवन भर उन्हीं शब्दों को ढोते रहते हो; उसका ना बोध होता है ना ज्ञान होता है। एक सहारा चाहिए जीने के लिए। तो मैं यही कहना चाहता हूँ — प्रत्यक्ष में जियो। अभी आपका जीवन अशांत है, तो इस अशांति से मैं कैसे छुटकारा पाऊँ — राग-द्वेष, मोह, आसक्ति, इच्छा, अपेक्षा, मेरा, कर्ता से मुक्त होऊँ — इसके लिए काम करो। और इसके लिए अगर काम किए ना, तो अहम गिर जाएगा, बचेगा परम सत्य। बस बात खत्म।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, आपको तो घरवाला अंदर आने देगा, लेकिन हमें तो घरवाला अंदर ही नहीं आने देगा। हमारे बारे में भी सोचिए। (P16-0191)

आप भी बस अपने आप को पवित्र कर लो — क्यों नहीं आने देगा? अपवित्रता में हम अंदर जा नहीं पा रहे हैं। अपनी पवित्रता के लिए काम करिए — नहीं, पवित्र तो आप अभी भी हैं; बस आपने जिस स्वभाव को धारण किया है उसे छोड़ दें, बात खत्म। आप अपवित्रता को छोड़ दो, बस बात खत्म — पवित्र हो। पवित्र होने के लिए कोई काम नहीं करना, बस अपवित्रता को छोड़ दो।

प्रश्न: (लाइव) अगर हम ना जाना चाहें, तो भी यहां कब तक अपने आप को रोक पाएंगे? (P16-0192)

प्रभु, जाना तो पड़ेगा ही, क्या करेंगे। हमने तो अपने जीवन में, बचपन से जब से समझने लायक हुए, यही कहा कि परमात्मा, मरने के बाद अगर कुछ देना, जन्म देना, तो प्रेम की नगरी; और अगर नरक-स्वर्ग होगा तो मुझे स्वर्ग ना देना, हाथ जोड़ता हूं, मुझे नरक देना — नरक में मैं कुछ कर सकता हूं, स्वर्ग में सब सुखी लोग रहेंगे। और इस संसार में दुख चुना, क्योंकि आखिरी परिणाम दुख ही है। मैंने कहा, दुख चुनो, बात खत्म करो — चुनाव दुख का करो, क्योंकि आखिरी परिणाम दुख है। खत्म करो, कुछ बात ना रहे तुम्हारे पास, क्योंकि जब तक तुम्हारे पास कुछ है तब तक तुम यहीं पड़े रहो।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, क्या आत्मा हमारे शरीर के अंदर उपस्थित है, या यह सिर्फ बताने के लिए कहा जाता है? (P16-0193)

देखो, आत्मा मैं ही हूं, कोई आत्मा हमसे अलग नहीं है। काहे को आत्मा के चक्कर में पड़ना? अपने चक्कर में पड़ो ना — मेरी स्थिति क्या है, मेरा जीवन शांति से परम शांति तक, परम आनंद तक कैसे जाएगा, उसके लिए मैं काम करूं या आत्मा के चक्कर में पड़ूं? आत्मा मैं ही तो हूं, और कौन है। मैं तो हूं ही, प्रत्यक्ष हूं — अपनी खोज मैं क्यों करूं? खोज ही गलत कर रहे हैं। कोई व्यक्ति आपसे पूछे, "भाई, मुझे पता बता दो" — "किसका?" — "मेरा", तो आप क्या कहोगे? पागल, तुम अपना पता लोगों से जाके पूछ रहे हो! किसी और का पूछे तो आप उसकी सहायता करोगे — फोटो दिखा या पता बता; दोनों नहीं है तो? तुम्हारा हाल यह है — परमात्मा को ढूंढ रहे हो, परमात्मा का पता नहीं; और उससे थोड़ा नीचे उतरे तो कहते हैं मैं खुद को ढूंढ रहा हूं। जरा सोचो — खुद को खुद ही ढूंढ रहे हो, कैसे मिलोगे? और इसमें लोग आपको सपोर्ट कर रहे हैं — "मैं तुम्हें ढूंढने में तुम्हारी मदद करूंगा" — और वो आपको लूट लेते हैं, और जिंदगी भर लुटते रहोगे। लूटने वाले भी बैठे हैं, लुटाने वाले भी। समझदार भी बता रहे, बुद्धिमान भी — मेरा पता मुझे बताओ, मैं कौन हूं। सबको पता है कि मैं कौन हूं, फिर भी पूछ रहे हैं। कहां लाके हमने अपने आप को खड़ा कर दिया, सोचो।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, अपवित्रता कैसे छोड़ें? और मुझे कैसे पता चलेगा कि मैंने कितनी और कैसी अपवित्रता धारण की है? (P16-0194)

बस जैसे अपनाया वैसे छोड़ दो, बात खत्म। पहले पता करो कैसे अपनाया हूं। अगर ये नहीं पता चलेगा तो आप अपवित्रता छोड़ने के लिए प्रयास भी करोगे और अपवित्र करते रहोगे। ... (कितनी और कैसी धारण की है) यह आप ही को पता चलेगा।

प्रश्न: (लाइव) गुरुजी, प्रेम की नगरी तो वृंदावन धाम है ना? (P16-0195)

मेरे लिए — देखिए, इस धरती पर मैंने प्रेम को समझा तो बस इतना समझा: अगर कुछ नहीं चाहिए तो विश्व में कहीं भी जाओ, आप प्रेम में जियोगे; और आपको कुछ चाहिए तो वृंदावन या वृंदावन के मंदिर में भी चले जाओ, तो आप घुटन में जियोगे। सीधी सी बात बता दूं — दुनिया में कहीं भी चले जाओ, उनको सीने से लगा के जिंदगी गुजार दो, लेकिन (कुछ चाहिए तो) आप घुटन में ही रहोगे; और आपको कुछ नहीं चाहिए तो दुनिया में कहीं भी चले जाओ, श्मशान में भी बैठे तो आप प्रेम में बैठे हो। बस इतना मैंने इस जिंदगी में समझा।

प्रश्न: (लाइव) मैं-तू का क्या खेल है? खेल का अंत कैसे होगा? (P16-0196)

बस रसपान करना छोड़ दो — खेल का अंत। उम्मीद छोड़ दो — एक-दूसरे से बना के उम्मीद रखी है, वह छोड़ दो, खेल खत्म।

प्रश्न: (लाइव) परंतु गुरुजी, रोटी, कपड़ा और मकान तो चाहिए? (P16-0197)

ठीक है, जरूरत में चाहिए। जरूरत में कोई नहीं फंसता है। मान के चक्कर में फंसता है, योग्यता से ज्यादा पाने में फंसता है, बड़ाई के चक्कर में फंसता है, दिखावे में फंसता है।

प्रश्न: (लाइव) प्रभु जी, मेरा प्रश्न है — सर्वव्यापक वही परमात्मा है, तो फिर क्या आने-जाने का परिश्रम करना जरूरी है? (P16-0198)

उसी को तो छोड़ना है भैया — ना आना, ना जाना। बस हो गया आना-जाना।

प्रश्न: (लाइव) आने-जाने वाले को कैसे जानें? (P16-0199)

आप ही तो आ-जा रहे हो, जानने की क्या जरूरत।

प्रश्न: (लाइव) योगी जी, अपनी आत्मा अर्थात् स्वयं का दर्शन कैसे करें? (P16-0200)

स्वयं को स्वयं के दर्शन की क्या जरूरत है? बस बाहर का दर्शन छोड़ दो। बाहर के दर्शन से मुक्त हो जाओगे तो आत्म-दर्शन हो जाएगा, बात खत्म। आप एक हो, तो एक ही जगह देख सकते हो — अगर किसी को देखोगे तो अपने आप को नहीं, अपने आप को देखोगे तो किसी को नहीं। देख तो एक ही कर सकते हो।